ओ३म्

इस अंक का मूल्य – 2.00 रुपये

आर्य जगत्

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

रविवार, 17 मार्च 2013

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक पत्र

सप्ताह रविवार 17 मार्च, 2013 से 23 मार्च, 2013

फा.शु.06 ● वि० सं०–2069 ● वर्ष 77, अंक 49, प्रत्येक मंगलवार को प्रकाश्य, दयानन्दाब्द 190 ● सृष्टि–संवत् 1,96,08,53,113 ● इस अंक का मूल्य – 2.00 रुपये

डी.ए.वी. पुष्पांजलि में लगा वैदिक चेतना शिविर

डी.ए.वी. स्कूल पुष्पांजलि में वैदिक चेतना शिविर स्कूल प्रागंण में आयोजित किया गया है जिसमें गुरुकुलीय दिनचर्या के अनुसार प्रातः जागरण से लकर रात्रि काल में सोने तक के कार्यक्रमों को संचालित किया गया। प्रातः तक 1.30 घंटे योगासन हुए। यज्ञोपरांत उद्घाटन सत्र का प्रारम्भ करते हुए प्रधानाचार्या श्रीमती स्नेह वर्मा जी ने कहा कि वैदिक चेतना शिविर का उद्देश्य मात्र वैदिक मान्यताओं पर चर्चा करना भर ही नहीं है अपितु हमारी दिनचर्या कैसी हो इस बात को भी समझना और पालन कराना

है। उन्होंने कहा कि हम सौभाग्यशाली हैं कि हम ऋषि दयानन्द और महात्मा हंसराज की मान्यताओं में शिक्षित हो रहे हैं।

वैदिक विदुषी श्रीमती अमृता जी ने छात्रों को सम्बोधित करते हुए कहा कि आप सब सौभाग्यशाली है कि महर्षि दयानन्द और हंसराज जैसे युग पुरुषों द्वारा दिए गए जीवन मूल्यों का प्रचार प्रसार इन शिक्षण संस्थाओं में हो रहा है। हमें इन वैदिक मूल्यों को अच्छी तरह से अपनाना चाहिए।

अन्तिम सत्र में बच्चों ने बात करते हुए वैदिक चेतना शिविरों को प्रत्येक मास आयोजित करने का आग्रह किया।

विदाई समारोह पर हुआ सामूहिक हवन का आयोजन

विदाई की परम्परा का निर्वाह करते हुए डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल प्रोफैसर कोलोनी यमुनानगर के प्रागँण में 12वीं कक्षा के विद्यार्थियों को विदाई देने के लिए प्री. उस परम पिता परमेश्वर से प्रार्थना करते हुए हवन यज्ञ किया। इस अवसर पर आर्य जगत् के सुप्रसिद् महात्मा स्वामी सच्चिदानंद जी ने विद्यार्थियों को यज्ञ की महत्ता को समझाते हुए उनकी सफलता की कामना की। यज्ञ के बीच–बीच पं. धर्मेंद्र शास्त्री ने भी अपने उद्बोधन द्वारा यज्ञ की महत्ता को दर्शाया। इस

अवसर पर संतकुमार त्यागी भी उपस्थित रहे। पूर्णाहुति के पश्चात् विद्यालय के प्रधानाचार्य श्री वी.एम ठाकुर ने कहा कि मनुष्य की मेहनत ईश्वर की कृपा के साथ ही है इसलिये पहले एकाग्र चित होकर परम पिता परमेश्वर को याद करना तथा कार्य समाप्त हो जाने पर उसके प्रति आभार व्यक्त करना आवश्यक है।

प्रधानाचार्य श्री ठाकुर जी ने सभी विद्यार्थियों के उज्ज्वल भविष्य की कामना करते हुए मार्च में होने वाली बोर्ड की परीक्षा में सफलता के लिए शुभकामना दी।

डी.ए.वी. मुजफ्फरनगर में प्रौजेक्ट 'बूँद' का आयोजन हुआ

एस.एफ. डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल, मुजफ्फरनगर के प्रांगण में प्रोजेक्ट 'बूँद' के अर्न्तगत लघु नाटक व कविताएँ छोटे–छोटे बच्चों के द्वारा प्रस्तुत की गई। प्रधानाचार्या ने दीप प्रज्ज्वलित कर कार्यक्रम का शुभारम्भ किया। लघु नाटिका विद्यालय के चारों सदनों के द्वारा प्रस्तुत की गई। जिसमें बच्चों ने कई प्रकार की भूमिकाएँ अदा कर जल बचाव का संदेश दिया।

प्रोजेक्ट 'बूँद' के अन्तर्गत लघु

नाटक में गंगा सादन ने प्रथम स्थान 'रावी सदन' ने द्वितीय स्थान प्राप्त किया बच्चों ने विभिन्न तरीकों से पानी बचाव व उसके संरक्षण का संदेश दिया, और बताया कि किस प्रकार पर अपने घरों में पानी का सदुपयोग कर सकते हैं। ये कविताएँ सुनायी गई, जिनमें सबका एक ही संदेश था कि ''जल ही जीवन है'' ''जल बचाओ, जीवन बचाओ''। अंत में प्रधानचार्या जी कु. रेनू शर्मा व अध्यापकगण ने बच्चों को जल के महत्व के विषय में बताया।

ओ३म्
आर्य जगत्
सप्ताह रविवार 17 मार्च, 2013 से 23 मार्च 2013

देवों के मार्ग पर चलें

● डॉ. रामनाथ वेदालंकार

आ देवानामपि पन्थामगन्म, यच्छक्नवाम तदनुप्रवोढुम्।
आग्निर्विद्वान्त्स यजात् स इद्धोता, सोऽध्वरान्त्स ऋतून् कल्पयाति।।

अथर्व 19.59.3

ऋषिः **ब्रह्मा**। देवता **अग्निः**। छन्दः **त्रिष्टुप्**।

● (**अपि**) क्या (**देवानां**) देवों के (**पन्थां**) मार्ग पर (**आ–अगन्म**) [हम] चलें? [हाँ], (**यत्**) यदि (**तत् अनुप्रवोढुम्**) उस पर स्वयं को चलने में (**शक्नवाम**) समर्थ हों। (**अग्निः**) आत्मा (**विद्वान्**) विद्वान है, (**सः**) वह (**यजात्**) यज्ञ करे, (**सः**) वह (**इत्**) सचमुच (**होता**) होम–निष्पादक है। (**सः**) वही (**अध्वरान्**) यज्ञों को और (**सः**) वही (**ऋतून्**) ऋतुओं को (**कल्पयाति**) रचाये।

● आओ, हम देवों के मार्ग पर चलें। यज्ञ के तंतु से बंधे रहना ही देवों का मार्ग है। देखो, ये सूर्य, चन्द्र, अग्नि, पृथिवी, ऋतु, संवत्सर आदि देव कैसे 'यज्ञ' के मार्ग पर चल रहे हैं। कभी उनके यज्ञ–पालन में व्यतिक्रम नहीं होता। शरीर में भी मन, बुद्धि, प्राण, इन्द्रियाँ आदि देव कैसे संगठित हो देवयान का अवलम्बन कर शरीर–यज्ञ को चला रहे हैं। समाज में भी 'देव' पदवी को पाये हुए महापुरुष 'यज्ञ' के ही पथ पर चला रहे हैं। और, सबसे बड़ा देवों का देव परमात्मा भी निरन्तर देव–मार्ग पर चलता हुआ इस ब्रह्मांड–यज्ञ का सम्पादन कर रहा है। हम चाहते हैं कि हम भी इस देव–मार्ग के पथिक बनें। क्या तुम चाहते हो कि इस मार्ग पर चलना अति कठिन है, तलवार की धार पर चलने के समान है, अतः पहले शक्ति को तोल लो कि तुम इस पर स्थिर रह भी सकोगे या नहीं, उसके पश्चात् इस मार्ग पग बढ़ाना? सुनो, हमने अपने सामर्थ्य को भलीभांति परख लिया है। हमारा आत्मा 'अग्नि' है, अग्रणी है, तेज का पुंज है, ज्योतियों की ज्योति है। वह 'विद्वान्' है, देवों की राह पर चलना और चलाना जानता है। अतः हमें देव–प्रदर्शित यज्ञ–मार्ग से भटक जाने का कोई भय नहीं है। हम निश्चिंत होकर उसके हाथों में अपनी 'यज्ञ' की पतवार सौंप रहे हैं। वह 'होता' है, यज्ञ–निष्पादन में कुशल है, संस्कृत हवि का होम करने में निष्णात है। वह जानता है कि यज्ञ को 'अध्वर' अर्थात् हिंसा–रहित ही होना चाहिए। भद्रजनों को हानि पहुँचाने के उद्देश्य से किया गया यज्ञ यज्ञ नहीं है। हमारा आत्मा 'अध्वर' यज्ञों को रचाये और वही यह भी देखे कि किस यज्ञ के लिए कौन सी ऋतु, कौन सा समय उपयुक्त है, क्योंकि काल–अकाल का विचार किये बिना प्रारंभ किया गया या सफल नहीं होता। आओ, हम देव–पथ के पथिक बनें।

❑

वेद मंजरी से

इस अंक में प्रकाशित सभी लेखों में व्यक्त भावों व विचारों के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी हैं और इसमें किसी आपत्तिजनक बात के लिए 'सम्पादक' एवं 'आर्य जगत्' उत्तरदायी नहीं होगा।

घोर घने जंगल में

● महात्मा आनन्द स्वामी

पिछले अंक मे स्वामी जी नम्रता की महीमा का वखान कर रहे थे। उन्होंने कहा की अपनी वास्तविकता को न भुले अभियान गिरावट की ओर ले जाऐगा अपनी वास्तविकता याद न आए तो किसी मैडिकल कॉलेज में तार से लटकेते हुए हड्डयों के ढांचे को देखो। यह है आपकी वास्तविकता अंत मे हमे इस स्थित में पंहुचना है नम्रता से काम और ईमानदारी के मार्ग पर चले।

अब आगे.....

दूसरा दिन

ओ३म् त्वं हि नः पिता वसो त्वं माता
शतक्रमो बभूविथ।
अधा ते सुम्नमीमहे।।

विद्वन्मण्डल, माताओ तथा सज्जनो!

कल हम बृहदारण्यक उपनिषद् के पाँचवें अध्याय की बात कर रहे थे। इस अध्याय में पन्द्रह ब्राह्मण हैं। पहला ब्राह्मण है 'ओम् खं ब्रह्म'। दूसरे में बताया गया कि प्रजापति ने कैसे एक ही अक्षर 'द' से देवता, असुर और मनुष्य को उपदेश दिया। देवताओं से कहा, "इन्द्रियों का दमन करो", मनुष्यों को कहा कि "दान करो", असुरों को कहा, 'प्राणिमात्र पर दया करो"। तब तीसरे ब्राह्मण में प्रश्न उत्पन्न हुआ कि वह प्रजापति कौन है और उत्तर मिला कि यह हृदय ही प्रजापति है। जैसे विचार हृदय में उत्पन्न होते हैं, वैसे ही कर्म मनुष्य करता है। इन कर्मों के अनुसार ही वह देवता भी बनता है, मनुष्य भी और असुर भी।

तब प्रश्न उत्पन्न हुआ कि हृदय को शुद्ध और पवित्र किस प्रकार बनाना चाहिए? इसको ठीक अर्थों में प्रजापति कैसे बनाना चाहिए? तो मैंने कहा, "पहला साधन यह है कि सत्संगी बन।" अच्छी संगत में रह और सत्संग की महिमा बताते हुए स्वर्गीय महाराज हरिसिंह की बात सुनाई। बताया कि किस प्रकार जस्टिस मेहरचन्द महाजन के सत्संग में आने के कारण उनके जीवन ने पलटा खाया, किस प्रकार उनके विचार बदले, किस प्रकार उनके विचारों के कारण, 'दयानन्द कॉलेज कमेटी' को एक विशाल धनराशि दान के रूप में मिली। कल मैंने दान की पूरी राशि बताई नहीं थी, क्योंकि मुझे पता नहीं था। सोचा, आज श्री मेहरचन्द जी महाजन से पूछकर बताऊँगा। आज उन्हें फ़ोन किया, तो मिले नहीं। परन्तु जो कुछ पता लगा वह यह कि स्वर्गीय महाराजा श्री हरिसिंह की सम्पत्ति जो उन्होंने दानरूप में 'दयानन्द कॉलेज कमेटी' को दी, वह एक करोड़ नहीं अपितु डेढ़ करोड़ से भी अधिक है।

आर्यसमाज के सारे इतिहास में इतना बड़ा दान आर्यसमाज को या उसकी किसी एक संस्था को कभी मिला नहीं। यह है सत्संग का प्रभाव! जस्टिस मेहरचन्दजी महाजन स्वयं समाजसेवी, ईश्वर–प्रेमी और सत्संग–सज्जन हैं। उनके सत्संग का प्रभाव महाराजा हरिसिंह पर भी हुआ, आर्यसमाज पर भी हुआ। जस्टिस मेहरचन्द जी महाजन का सत्संग–प्रेम मैं भी भूल नहीं पाता। जब वे भारत की सुप्रीम कोर्ट के चीफ़ जस्टिस थे,तब आर्यसमाज बेयर्ड रोड का अपना कोई मन्दिर नहीं था। साप्ताहिक सत्संग एक वृक्ष के नीचे दरियाँ बिछाकर लगाया जाता था और जस्टिस मेहरचन्द महाजन प्रति रविवार को चुपचाप इस सत्संग में आकर बैठ जाते थे। यह है उनका सत्संग–प्रेम! ऐसे महापुरुष की संगत महाराजा हरिसिंह जी को मिली, तो उनका जीवन ही बदल गया।

परन्तु यह सत्संग का एक रूप है। इसका एक और रूप भी है जिसका मैं वर्णन नहीं कर सका। यह है सत्यस्वरूप परमात्मा की संगत। हर समय प्रत्येक स्थान पर वह महाशक्ति विद्यमान है। वह देवों का देव, महादेव, हर समय देखता हुआ, हर समय जागता हुआ परमज्ञान, परमानन्द, परम ज्योति है। उसका सत्संग करना चाहिए। उठते–बैठते, सोते–जागते,

रोते–गाते, हर समय उसका स्मरण करना ही सत्संग है। जो ऐसा सत्संग करता है, उसका बेड़ा पार हो जाता है।

सत्संग के पश्चात् हृदय को पवित्र बनाने का दूसरा साधन है– तप। वेद कहता है, शास्त्र कहते हैं, ऋषि और महर्षि कहते हैं– ऊपर उठना चाहता है तो तपस्वी बन:

अतप्ततनूर्न तदामो अश्नुते। (ऋ. 9।83।1)

'जिसने अपने शरीर को दुखाया नहीं, तप नहीं तपा, वह कभी सुख को पाएगा नहीं।' यदि कोई व्यक्ति कहे कि व्यायाम करने का कष्ट कौन सहन करे, सैर करने, योगासन करने, पहाड़ पर जाने का झंझट कौन मोल ले, तो याद रखो, उसका शरीर रोगी होगा अवश्य। तप के बिना शरीर के दु:ख का नाश नहीं होता और पाप का नाश भी नहीं होता। मनु महाराज ने कहा है–

तपसा किल्विषं हन्ति।

'तप से पाप का नाश होता है। मन का मैल दूर हो जाता है।'

तब मैंने बताया कि तप तीन प्रकार का है– पहला शारीरिक, दूसरा वाचिक, तीसरा मानसिक। शारीरिक तप के सम्बन्ध में भगवान् कृष्ण ने जो कुछ कहा वह आपको सुना रहा था। परन्तु उस शारीरिक तप से पूर्व एक और बात सुनिए। कल मैंने यज्ञ की महिमा बताते हुए यजुर्वेद के एक मन्त्र की चर्चा की थी–

कस्त्वा विमुञ्चति? स त्वा विमुञ्चजि। कस्मै त्वा विमुञ्चति? तस्मै त्वा विमुञ्चति।

इस मन्त्र का पहला भाग ही सुनाया। पहले भाग का ही अर्थ बताया। तब एक सज्जन ने कहा कि पूरा मन्त्र सुनाकर पूरा अर्थ बताइए। सो पहले उस भाई के प्रश्न का उत्तर दे लूँ। यह है पूरा मन्त्र–

कस्त्वा विमुञ्चति? स त्वा विमुञ्चति। कस्मै त्वा विमुञ्चति? तस्मै त्वा विमुञ्चति? पोषाय रक्षसां भागोऽसि।। (य. 2।23)

इसका अर्थ करते हुए महर्षि दयानन्द कहते हैं–

"कौन सुख चाहनेवाला यज्ञ का अनुष्ठाता यज्ञ को छोड़ता है? अर्थात् कोई नहीं छोड़ता। और जो कोई यज्ञ को छोड़ता है उसको यज्ञ का पालन करनेवाला परमेश्वर छोड़ देता है और यह जो यज्ञ करने वाला यज्ञ के सभी पदार्थों को अग्नि में छोड़ता है तो किसलिए छोड़ता है? निश्चय ही यह सबके सुख के लिए छोड़ता है और जो सबके सुख के लिए नहीं छोड़ता, सबके हित के लिए नहीं छोड़ता, वह राक्षसों का भाग बन जाता है।"

इसका भावार्थ करते हुए महर्षि लिखते हैं.... परन्तु यह लाउड स्पीकर क्या कहता है? (लाउड स्पीकर वस्तुत: खराब था। बार–बार उससे चीखने की आवाज़ आती थी। स्वामीजी ने हँसते हुए कहा–) यह तो बहुत चीखता है। क्या इस बेचारे का कोई इलाज नहीं हो सकता? (मिस्त्री महोदय ने बैटरी का इलाज किया। चीखने की आवाज कुछ कम हुई। स्वामी जी हँसते हुए बोले–) अब इसका चिल्लाना कुछ कम हुआ, परन्तु इसके लिए मैं रुक तो नहीं सकता। आप ऐसे ही सुनिए।

महर्षि कहते हैं– "जो मनुष्य ईश्वर के करने–करानेवाले काम को, उसकी आज्ञा को छोड़ देता है, अर्थात् उसका पालन नहीं करता, उसे किसी भी प्रकार सुख कभी नहीं मिलता। किसी ने पूछा कि जो ईश्वर की आज्ञा को, उसके बताये हुए मार्ग को छोड़ता है, उसके लिए क्या परिणाम होता है? उसका उत्तर मिला, जो ऐसा करता है, जो सबके हित के लिए यज्ञ नहीं करता उसका कर्म, उसका यज्ञ में छोड़ा हुआ पदार्थ, राक्षस–वृत्ति को उत्पन्न करता है।"

यह है इस मन्त्र का अर्थ। जिस भाई ने प्रश्न पूछा था, उसकी इच्छा पूर्ण हुई। अब पुन: विषय की ओर आइए। भगवान् कृष्ण ने गीता में कहा–

देवद्विजगुरुप्राज्ञपूजनं शौचमार्जवम्।
ब्रह्मचर्यमहिंसा च शारीरं तप उच्यते।।

हमने देखा कि देवता, द्विज, गुरु और प्राज्ञ कौन हैं? उनकी पूजा से शारीरिक तप किस प्रकार होता है? हमने यह भी देखा कि शौच और नम्रता क्यों आवश्यक हैं?

महर्षि स्वामी दयानन्द अपने गुरु के लिए यमुना नदी के बीच जाकर जल भरकर लाते, उन्हें नहलाते और सेवा करते थे।

श्लोक के अगले भाग में ब्रह्मचर्य और अहिंसा का वर्णन है। पहली बातें विद्यमान हों और ये दोनों बातें ब्रह्मचर्य और अहिंसा शारीरिक तप को पूर्ण करते हैं। जो खाया–पीया है, उससे शरीर में जो इत्र खिंचा है उसे सँभालकर रखना–यह ब्रह्मचर्य का एक अर्थ है; दूसरा अर्थ है ब्रह्म में विचरना, हर समय अपने–आपको परमात्मा की गोदी में अनुभव करना; और अहिंसा का अर्थ है किसी को शरीर के द्व ारा हानि न पहुँचाना।

इस श्लोक से अगले श्लोक में वाणी के तप की बात कही। इसमें स्वाध्याय की बात अभी कह देता हूँ। हमारे शास्त्रों ने स्वाध्याय की बड़ी महिमा गान की है। वेद, उपनिषद् और दूसरे अच्छे ग्रन्थों का नित्यप्रति पाठ करना स्वाध्याय के अर्थों मे आता है। थोड़ा पढ़ा जाए या अधिक, परन्तु प्रतिदिन पढ़ना अवश्य। पढ़ना और पढ़े हुए पर विचार करना, यह स्वाध्याय है। 'शतपथ ब्राह्मण' का विश्वास है कि जो व्यक्ति प्रतिदिन स्वाध्याय करता है, वह अपना वैद्य आप बन जाता है, अपना नेता आप हो जाता है, अपनी उलझनों को आप सुलझा लेता है। यह जीवन है न! मैंने इसे घोर घना जंगल कहा था। इसमें कई बार रुकावटें आ जाती हैं : रास्ता मिलता नहीं, रोशनी मिलती नहीं। ऐसा प्रतीत होता है जैसे एक दीवार सामने आ गई है; उसे पार करना सम्भव नहीं। परन्तु जो व्यक्ति प्रतिदिन स्वाध्याय करता है, उसके लिए यह मार्ग अपने–आप खुल जाता है। उसके लिए रुकावटें अपने–आप दूर हो जाती हैं।

विष्णु पुराण में तो स्वाध्याय की महिमा अति सुन्दर शब्दों में गाई गई है। एक गाथा उसमें आती है। मैत्रेय ने महर्षि पराशर से पूछा, 'नंगा कौन है?'

कहने को बात साधारण–सी प्रतीत होती है। महर्षि पराशर कह सकते थे जिसने कपड़ा नहीं पहना, वह नंगा है। परन्तु मैत्रेय के प्रश्न में रहस्य था। महर्षि ने उसे समझा, वैसे ही उसका उत्तर दिया।

मैत्रेय ने पूछा–

को नग्न: किं समाचारो नग्नसंज्ञां नरो लभेत्।
नग्नस्वरूपमिच्छमि यथावत् कथितं त्वया।।

'हे महाराज! नंगा कौन है? कैसे आचरण करने से मनुष्य 'नंगा' है, ऐसा कहा जाता है? मुझे इस 'नग्नरूप' को जानने की इच्छा है। आप मुझे अच्छी प्रकार समझाकर कहिए।'

ऋग्यजुस्सामसज्ञेयं त्रयी वर्णावृतिर्द्विज:।
एतामुज्झति यो मोहात्स नग्न: पातकी द्विज:।।
त्रयी समस्तवर्णानां द्विजसंवरणं यत:।
नग्नो भवत्युज्झितायामतस्तस्यां न संशय:।।

'ऋग् यजु: और साम, यह त्रयी विद्या है, यह है तीनों वर्णों के ओढ़ने का कपड़ा। इस विद्या के कारण तीनों वर्ण ढके रहते हैं, आदर पाते हैं। जब इन तीन वर्णों का कोई व्यक्ति इस त्रयी विद्या से विमुख हो जाता है, उसे छोड़ देता है, तब उस पापी व्यक्ति को 'नंगा है' ऐसा कहा जाता है। यह सच्ची बात है, इसमें सन्देह नहीं।'

और तब महर्षि पराशर ने मैत्रेय को एक कहानी सुनाई जो बहुत वर्ष पूर्व महर्षि वशिष्ठ ने महाराज भीष्म के सामने रखी थी। वशिष्ठ जी ने कहा, "एक बार देवता और दैत्य (असुर) लोगों में बहुत बड़ा युद्ध हुआ। कई वर्ष यह युद्ध होता रहा। अन्त में देवता लोग हार गये, दैत्य लोग जीत गये। देवता तब दु:खी होकर एक 'डेपूटेशन' बनाकर विष्णु महाराज के पास पहुँचे; बोले, "महाराज! हम हार गये, दैत्य लोग जीत गये। कोई ऐसा उपाय बताइए कि वे हार जाएं और हमारी जीत हो जाए।"

विष्णु महाराज ने पूछा, "हे देवताओ! दैत्य लोग यदि जीते हैं तो उसका कारण क्या है?"

देवताओं ने कहा, "दैत्य लोग सत्यधर्म को माननेवाले हैं, वेदमार्ग पर चलने वाले हैं, तप करते हैं, इसलिए वे जीत गये। अब कोई ऐसा उपाय बताइए कि वे हार जाए और हमारी विजय हो जाए।"

विष्णु महाराज ने कहा, "इसका तो एक ही उपाय है कि दैत्य लोगों में माया–मोह उत्पन्न कर दिया जाए। इस माया–मोह में फंसकर वे वेदमार्ग को भूलेंगे। उसके भूलने से ही उनका सर्वनाश होगा।"

देवताओं ने पूछा, "ये मोह–माया उनमें किस प्रकार उत्पन्न होंगी?

विष्णु महाराज ने कहा, "मैं इसका प्रबंध करता हूँ। एक ऐसी वस्तु बनाता हूँ जो उन्हें मोहित कर दे।"

यह प्रबन्ध हो गया। दैत्य लोग मोह–माया के जाल में फँस गये। भूल गये वेद का मार्ग, भूल गये अपना–अपना धर्म, भूल गये तप और दीक्षा की बात। फिर से युद्ध आरम्भ हुआ और इस बार दैत्य लोग हार गये। देवताओं की जीत हो गई। इस कथा को सुनकर महर्षि पराशर बोले, "सुनो मैत्रेय! जो व्यक्ति वेद–मार्ग को छोड़ देता है, जो त्रयी विद्या से विमुख हो जाता है, वह नंगा हो जाता है; उसकी फिर किसी भी प्रकार से रक्षा नहीं हो सकती। इस संसार में वही नंगा है जो वेद और दूसरे शास्त्रों से परे हट गया है। जो इनका स्वाध्याय नहीं करता वह पापी और नंगा है।" यह है इस प्रश्न का उत्तर कि नंगा कौन है?

आप यदि समझते हैं कि सूट–बूट पहनकर, सुन्दर और चमकदार वस्त्र पहनकर आपने अपना नंगापन ढक लिया तो ग़लत समझते हो भाई! सोचकर देखो। महर्षि पराशर कहते हैं कि, "इन कपड़ों को पहनकर भी आप नंगे घूम रहे हैं।

मैं जानता हूँ कि यह बात आपको अच्छी नहीं लगती, परन्तु सोचकर देखो कि क्या आज बेहयाई का दौर–दौरा नहीं? आज आँखों की शर्म नहीं, वृद्धों की शर्म नहीं। बिरादरियाँ बेचारी स्वयं ही समाप्त हो गईं। इनकी शर्म कहाँ रहेगी? यह बेहयाई किसलिए है? इसलिए कि हमने तन के कपड़े पहने अवश्य, परन्तु मन के नंगेपन को समाप्त करनेवाला स्वाध्याय छोड़ दिया। वेद का मार्ग छोड़ दिया। और शास्त्र पुकारकर कहता है–

वेदवादं परित्यज्य न कश्चित्सुखमेधते।

'वेदवाद को, वेद के मार्ग को छोड़कर कभी किसी को सुख नहीं मिलता।'

कर लो प्रयत्न। लगा लो टेलीफ़ोन और टेलीविज़न। बना लो हवाई जहाज़ और रॉकेट, ऐटम बम और हाइड्रोजन बम। कर लो अपने कमरों को 'एयर–कण्डीशण्ड'। बिछा लो ग़लीचे और सोफ़े। परन्तु जब तक वेदमार्ग को अपनाओगे नहीं, तब तक सुख नहीं मिलेगा, क्योंकि इन बातों में सुख नहीं मिलता, क्योंकि इन बातों में सुख है नहीं–सुख का छलावा है केवल।

रणवीर जब अमेरिका गया तो वापस आकर उसने मुझे एक बात सुनाई। एक बहुत धनी नगर में था वह। टेलीविजन पर वह भारत के योगियों की बातें सुना रहा था। तभी एक अमेरिकी सज्जन ने

शेष पृष्ठ 5 पर ☞

हम सदा सद्गुणों को ग्रहण करें

● डॉ. अशोक आर्य

आज के युग में गुणों से भरे मार्ग पर चलने वाले लोग उँगलियों पर गिने जा सकते हैं। गुणों के ह्रास से ही संसार आज अद्यःपतन की ओर जा रहा है। अपने अधिकार पाने की एक दौड़–सी लगी हुई है। किसी को भी कर्तव्य की ओर देखने व उसे समझने तथा उस पर चलने की भावना ही नहीं रही। आज स्थिति यहाँ तक पहुंच गई है कि एक बालक, जिसे पाल–पोस कर बड़ा किया जाता है, पढ़ाया–लिखाया जाता है। अच्छी प्रकार से उसका भरण–पोषण किया जाता है तथा उत्तम वस्त्र उसे पहनने को दिए जाते हैं। यह सब कर्तव्य पूर्ण करने में माता–पिता जीवन भर की कमाई लगा देते है। जब उसकी आयु ढल जाती है, वह बुढ़ापे की अवस्था में पहुंचता है, अनेक रोग उसे घेर लेते हैं, इस अवस्था में उसे सहारे की आवश्यकता होती है। इसी अवस्था में वही संतान, जिसे बनाने के लिए उसने अपना जीवन खपा दिया, आज उसे दुत्कारती है तथा यह कहने पर कि माता–पिता ने तेरा पालन किया है तो उत्तर देती है कि यह तो उनका कर्त्तव्य था, हमारे लिए नहीं अपने कर्तव्य को पूरा करने के लिए उन्होंने यह सब किया था। अपनी नाक बचाने के लिए यह सब किया था। जब कहा जाता है, कि तुम्हारा भी इन के लिए कुछ कर्तव्य बनता है, तो उत्तर होता है कि हमारा अपने बच्चों के लिए भी कर्तव्य है, उसे पूरा करें या इनको संभालें। जिस माता–पिता ने उसे यह संसार दिखाया, आज उनकी देखरेख करने वाला कोई नहीं, क्योंकि हमने संतान का पालन तो किया, किन्तु उसे सुसंतान न बना पाए। अच्छे गुण उनमें नहीं भर सके। ऋग्वेद के मन्त्र 5.82.5 में प्रभु से प्रार्थना की गई है कि– हे प्रभु, हमें अच्छे गुण ग्रहण करने की शक्ति दो। मन्त्र मूल रूप में इस प्रकार है:

विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परा सुव।

यद् भद्रं तन्न आ सुव।। ऋग्वेद 5.82.5।।

हे संसार के उत्पादक, कल्याणकारी परमेश्वर, आप हमारे सारे दुर्गुण, दुर्व्यसन तथा दुर्गुणों को दूर कीजिए और जो कल्याणकारी गुण, कर्म, पदार्थ हैं, वह हमें दीजिए।

इस मन्त्र में वैदिक संस्कृति के लक्षण बताये गए हैं। संस्कृति क्या है, इसका अर्थ क्या है? आओ पहले इसे जानें, फिर हम आगे बढ़ेंगे। संस्कृति नाम है– संस्कार का। संस्कार से परिष्कार होता है तथा परिष्कार से संशोधन होता है। अतः संस्कार, परिष्कार व संशोधन को ही हम संस्कृति कह सकते हैं। बालक का जन्म होता है, उसे कुछ भी ज्ञान नहीं होता, माता–पिता उसे संस्कार देते हैं, विगत संस्कारों को परिष्कृत कर,उनका संशोधन करते हैं, तब कहीं जाकर वह बालक एक उत्तम मानव की श्रेणी में आ पाता है। इसलिए हमारी संस्कृति के आधार हैं– संस्कार, परिष्कार तथा संशोधन। इसे समझाने के लिए हम कृषि या खेती का बड़ा ही सुन्दर उदाहरण देख सकते हैं।

किसान अपने खेतों में से अनावश्यक घास फूंस, जो स्वयं ही उग आता है तथा भूमि की उर्वरक शक्ति का शोषण करने लगता है, को खोदकर निकाल बाहर करता है। तत्पश्चात अपने खेत को समतल कर इसमें उत्तम प्रकार के बीजों को डालता है। इस खेती में समय–समय पर खाद व पानी देकर इसे पुष्ट भी किया जाता है। इससे उगने वाले पौधों में अच्छे गुणों का आधान होता है। तथा अच्छे फलस्वरूप इसका परिणाम किसान को मिलता है। कुछ ऐसा ही कार्य संस्कृति करती है। बालक के अन्दर जितने भी अवांच्छनीय तत्व होते हैं, जितने भी दुर्गुण होते हैं या किसी भी प्रकार की कमियां बालक में होती हैं, संस्कृति उन सबको दूर कर, उनके स्थान पर अच्छे गुणों को प्रतिस्थापित करती है। बस इस कार्य को ही हम संस्कृति कहते हैं। हम संस्कृति को संक्षेप में इस प्रकार परिभाषित कर सकते हैं– दुर्गुण निवारण और सद्गुण स्थापन ही संस्कृति है।"

ऊपर के प्रकाश को सम्मुख रखते हुए इस मन्त्र में कहा गया है कि जितने दुर्गुण, दुर्विचार या जितने भी दुःख देने वाले तत्व हैं, हे प्रभु, सह सब हमसे दूर कीजिए तथा जितने भी सद्गुण, सद्विचार अथवा शुभ तत्व हैं, वह सब हमें प्रदान कीजिए।

इस प्रकार गुणों को प्राप्त करने व दुर्गुणों को दूर करने का कार्य यह संस्कृति मानव के जीवनपर्यंत करती रहती है, यह क्रम चलता रहता है। तब ही तो मानव दुराचारों तथा पापाचारों से अपने को बचाते हुए सद्गुणों की प्राप्ति की ओर बढ़ता है, इनमें प्रवृत्त होता है, इन्हें ग्रहण करता है। जब सद्गुणों में यह प्रवृति बद्धमूल हो जाती है, समा जाती है, तब मानव में से सब प्रकार की दुर्भावनाओं, दुराचारों का नाश हो जाता है तथा अच्छे गुण, अच्छे संस्कारों में निरंतर वृद्धि होती रहती है। इस प्रकार अच्छे गुणों को प्राप्त करते हुए मानव मानवता से देवत्व की ओर बढ़ता ही चला जाता है। जिस मानव में ऐसे गुणों की प्रचुरता आ जाती है, संसार उन्हें युगों–युगों तक याद करता है, उसके पदचिन्हों पर चलने का प्रयास करता है, तथा उसे देवतातुल्य आदर–सत्कार देने लगता है। अतः हम मन्त्र की भावना को अपनाते हुए, संस्कृति के भाव को आत्मसात करते हुए, अपने दुर्गुणों को त्यागें तथा अच्छे गुणों को ग्रहण करके संसार के सम्मुख अच्छा उदाहरण रखें।

204 – शिप्रा अपार्टमेन्ट, कोशाम्बी
जिला–गाजियाबाद (उ.प्र.)
चलवार्ता : 09718528068

तीर्थ

● नरेन्द्र आहूजा 'विवेक'

पिछले दिनों घटी एक दुर्घटना ने मुझे अंदर तक झकझोर दिया और सोचने पर विवश कर दिया, आखिर समाज में फैली भ्रान्तियां, पाखंड और अंधविश्वास हमें अधोगति की ओर ले जाकर पतन के किस गहरे खड्डे में धकेल रहे हैं? आखिर किस प्रकार इस पतन से हम बच पाएंगे।

घटना कुछ इस प्रकार की है– अपने एक सामाजिक मित्र का फोन आया– "विवेक जी आप कुछ प्रतिष्ठित लोगों को लेकर इधर आ जाएं एक बंद मकान के कमरे से महिला के लगातार कराहने, क्रंदन की आवाजें आ रही हैं।" बात चौंकाने वाली थी, कुछ लोगों के साथ वहां पहुंचे, मकान का ताला तोड़कर अंदर घुसे तो देखा कि एक बूढ़ी बीमार मां अपनी हालत पर रो रही है। पूछने पर पता चला कि बेटा–बहू–बच्चे गर्मियों में 'तीर्थयात्रा' पर गंगा स्नान करने गए हैं। आप साथ क्यों नहीं गईं तो बताया कि, "पहले से ही बीमार थीं।" फिर बच्चों को ऐसी 'तीर्थयात्रा' पर क्यों जाने दिया? 'उन्हें तीरथ से रोकती तो मुझे पाप लगता।" वह बीमार बूढ़ी मां को घर में बाहर से बंद करके चले गए– अब कौन–सा पुण्य मिलेगा। "वह तो तीरथ पर मेरे लिए ही प्रार्थना करने गए हैं, फिर मंदिर के पंडित ने भी कहा था, "भगवान का नाम लेकर जाओ, तीरथ जा रहे हो, भगवान से मां के लिए प्रार्थना करना, भगवान खुद मां की रक्षा करेंगे। पंडित की बात मानकर बेटा–बहू–पोते सब मुझे दस दिनों के लिए अकेला छोड़कर दवाइयां रखकर और बाहर से ताला लगाकर चले गए थे।" हम सोचकर हैरान थे आखिर यह कैसी तीरथ यात्रा है, जो बीमार बूढ़ी मां को अकेले बेसहारा छोड़कर तीरथ के बहाने गर्मियों में पहाड़ों पर घूमने और गंगा में नहाने की इजाजत देती है और उस पर भी इस मौज–मस्ती को तीरथ की धार्मिकता का लबादा पहना दिया गया है। बूढ़ी बीमार मां को अस्पताल में दाखिल करवाया गया और परिवार को संपर्क करके उस तथाकथित तीर्थयात्रा से वापिस आने का अनुरोध किया गया।

इस घटना ने सोचने पर विवश कर दिया आखिर तीर्थ किसे कहते हैं? आखिर स्थान व नदी विशेष में स्नान का नाम तीर्थ क्यों पड़ा? तीर्थ के क्या लाभ हैं? इन प्रश्नों के उत्तर देव दयानन्द रचित वैदिक साहित्य में मिले। **स्वमंतव्यामंतव्या** प्रकाश में देव दयानन्द तीर्थ की परिभाषा देते हुए लिखते हैं– **"जिससे दुख सागर से पार उतरें कि जो सत्यभाषण, विद्या, सत्संग, यमादि, योगाभ्यास, पुरुषार्थ, विद्या दान आदि शुभ कर्म हैं, उसी को तीर्थ कहते हैं। इतर जल स्थल आदि विशेष को नहीं।"**

यहां तीर्थ की परिभाषा देते हुए कहा कि दुःख सागर से तारने वाले व उतारने वाले कर्म विशेष ही तीर्थ कहलाते हैं। यदि हम कर्म फल सिद्धांत को समझें तो हम जानेंगे कि मनुष्य मननशील, विचारशील स्वतंत्र–कर्ता है अर्थात किसी भी कार्य को करने से पूर्व मनुष्य होने के नाते मनन–विचार करके स्वतंत्रतापूर्वक करता है। स्वतंत्रता कर्ता अर्थात् कार्य को करने, ना करने व अन्यथा किसी अन्य प्रकार से करने के लिए स्वतंत्र है। स्वतंत्र कर्ता होने के कारण मनुष्य परमपिता परमेश्वर का न्याय–व्यवस्था के अधीन भोक्ता भी है। यहां हमारे कर्मों के भाग फल ही हमारा नियति, प्रारब्ध या आगामी सुख दुःख का कारण बनते हैं। इस प्रकार यह स्पष्ट होता है कि हमारे कर्म ही फल के रूप में हमारे सुख या दुख का कारण बनते हैं। वेदों में भी स्पष्ट आदेश है कि प्रत्येक मनुष्य को अपने–अपने किए प्रत्येक शुभ–अशुभ

शेष पृष्ठ 7 पर ☞

योग गुरु स्वामी रामदेव और आर्य समाज

● अश्विनी कुमार पाठक

स्वामी रामदेवजी एक महान् आर्य संन्यासी हैं। इन्होंने गुरुकुल में शिक्षा प्राप्त की है। इन्होंने योग का प्रचार संसारभर में किया है जिसे करोड़ों लोगों को लाभ पहुंचा है। आयुर्वेद की उन्नति के लिए भी आप बड़ा प्रयास कर रहे हैं और लोगों को सस्ते दामों में आयुर्वेदिक औषधियां उपलब्ध करा रहे हैं।

पातंजलि मुनि ने योग के आठ अंग बताए हैं अर्थात यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि। इनमें से पहले चार नियम शरीर को स्वस्थ रखने के हैं और बाकी चार प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि ईश्वर प्राप्ति का साधन हैं। आर्य समाज भी योग द्वारा ही ईश्वर प्राप्ति का प्रचार करता है। इसका मुख्य लक्ष्य संसार का उपकार करना है जो छठे नियम में बताया गया है अर्थात् शारीरिक, सामाजिक तथा आत्मिक उन्नति करना।

स्वामी रामेदवजी ने योग और आयुर्वेद के अतिरिक्त 'भारत स्वाभिमान' नाम से भी एक संस्था बनाई हुई है जिसका लक्ष्य देश का उद्धार करना है। इस संस्था के द्वारा वे विदेशों में भारतीयों का जमा काला धन वापस लाने के लिए भी आन्दोलन कर रहे हैं। इन्होंने दो बार दिल्ली के रामलीला मैदान में उपवास करके केन्द्र सरकार से विदेशों से कालधन वापस लाने की मांग की है, परन्तु सरकार इसकी कोई परवाह नहीं कर रही, जबकि लगभग सब विरोधी पार्टियों ने इनकी मांग का समर्थन किया है। श्री अन्ना हजारे भ्रष्टाचार समाप्त करने के लिए जन लोकपाल बिल पास करने का सरकार से अनुरोध करते हुए उपवास कर चुके हैं, परन्तु इनकी मांग भी अभी तक मानी नहीं गई। स्वामी रामदेवजी भी अन्ना हजारे की मांग का समर्थन कर रहे हैं। आर्य समाज के लोग भी श्री अन्ना हजारे और स्वामी रामदेव का समर्थन कर रहे हैं। श्री रामदेव ने अब सरकार का विरोध शुरू कर दिया है।

स्वामी रामदेवजी ने यह घोषणा की है कि सन् 2014 में होने वाले लोकसभा चुनाव से पहले कोई बड़ा आन्दोलन नहीं किया जाएगा। परन्तु चुनाव प्रणाली में सुधार के लिए इन्हें चुनाव आयोग के सदस्यों से मिलना चाहिए, क्योंकि आजकल अपराधी प्रवृत्ति के लोग भी चुनाव लड़कर विधायक, सांसद तथा सरकार में मंत्री तक बन रहे हैं, जो सर्वथा अनुचित है। दूसरी बात प्रधानमंत्री तथा प्रदेशों के मुख्यमंत्रियों के बारे में श्री मनमोहन सिंह जी से पहले जितने भी प्रधानमंत्री हुए हैं, वह सब जनता द्वारा चुने गये लोकसभा के सदस्य थे, परन्तु श्री मनमोहन सिंह राज्यसभा के सदस्य हैं। सोनिया गांधी ने इनको प्रधानमंत्री बनवा दिया, जो सर्वथा अनुचित था। प्रधानमंत्री तो लोकसभा में बहुमत का नेता होता है जो उस समय प्रणव मुखर्जी थे और प्रदेशों में मुख्यमंत्री, विधान सभा में बहुमत के नेता होते हैं, इसलिए चुनाव कानून में अगर कमी है तो सुधार होना चाहिए। इसके अतिरिक्त हमारे देश में समस्याएं तो अनेक हैं परन्तु वर्तमान सरकार कुछ भी सुनने को तैयार नहीं है।

हमारे देश में कुछ समय से महिलाओं को शिक्षित नहीं किया जाता था। महर्षि दयानन्द ने महिलाओं का मान बढ़ाया था तथा उन्हें पुरुषों के बराबर अधिकार देने की बात कही थी। इसके बाद आर्य समाज ने इनके लिए शिक्षणालय खोले।

आजकल महिलाओं के साथ छेड़खानी और बलात्कार के केस बहुत बढ़ रहे हैं। दहेज के लिए भी महिलाओं को प्रताड़ित किया जा रहा है। आर्य समाज को इस बारे में जनता को जागरूक करना चाहिए। ऐसे मामलों में अदालतों को दोषी व्यक्तियों को सख्त सजा देनी चाहिए। जो मृत्युदंड अथवा निपुंसक बनाना हो। सरकार कानून में संशोधन करे। छेड़छाड़ के केसों का निपटारा शीघ्र होना चाहिए। प्रदेशों की सरकारों को अपने यहां छपने वाले समाचार–पत्रों में महिलाओं के अर्धनग्न चित्र छापने पर रोक लगाई जानी चाहिए। लड़कियों के विवाह पर उनके माता–पिता को बारातियों को कई प्रकार के भोजन खिलाने का प्रचलन हो गया है, जिस पर लाखों रुपया खर्च होता है। इस पर भी रोक लगवाई जाए। क्योंकि उपरोक्त कारणों से ही कन्या भ्रूण हत्याएं हो रही हैं। स्वामी रामदेवजी योग शिविरों में इसको रोकने का प्रचार करें। आर्य समाज तथा अन्य धार्मिक संस्थाएं सादा विवाहों का आयोजन करें। एक ही गांव और गौत्र के युवक–युवतियों के प्रेम विवाहों के कारण भी ओनर किलिंग तथा कन्या भ्रूण हत्याएं हो रही हैं। इसके लिए ऐसे विवाह न हों तो अच्छा होगा। राज्य सरकारों को गरीब–अमीर सबकी शिक्षा का प्रबंध समान रूप से करना चाहिए। चाहे स्कूल प्राइवेट हों अथवा सरकारी। अमीर लोगों से उचित फीस ले सकते हैं। जिन राज्यों में अभी तक लोक आयुक्त का कानून नहीं बना हो उसके लिए भी स्वामी रामदेव यत्न करें।

एक विशेष बात, सरकारी नौकरियों में आरक्षण की है। किसी धर्म और जातपात पर आधारित आरक्षण अब बन्द होना चाहिए। गरीबी रेखा के नीचे वाली सभी जातियों को आरक्षण का लाभ मिलना चाहिए। प्रमोशन में आरक्षण न हो। स्वामी रामदेव इसे भी अपनी मांगों में शामिल करें।

स्वामी रामदेवजी सब मत–मतान्तर के लोगों को साथ लेकर अपना आन्दोलन चला रहे हैं, यह बड़ी अच्छी बात है– परन्तु इन्हें अपने वैदिक धर्म के सिद्धान्तों पर दृढ़ रहना चाहिए। किसी दूसरे मत की आलोचना न करें। सबसे प्रेमपूर्वक व्यवहार करते रहना चाहिए।

तुलसी इस संसार में भांति–भांति के लोग।
सब मिल रहें प्रेम से, नदी–नाव संयोग।।

स्वामीजी को अपने 'भारत स्वाभिमान ट्रस्ट' की कार्यकारिणी में अच्छे, बुद्धिमान व्यक्तियों को रखना चाहिए और उन सबसे विचार–विमिमय करके ही आन्दोलन चलाना चाहिए। अकेले निर्णय लेने में कोई गलती हो सकती है। इस समय कोई भी राजनीतिक दल ठीक तरह से कार्य नहीं कर रहा। इसलिए इन्हें किसी दल का भी समर्थन नहीं करना चाहिए।

महर्षि दयानन्द ने आर्य समाज की स्थापना प्रजातन्त्र के आधार पर की थी। उस समय हमारे देश में विदेशी अंग्रेजों का शासन था। महर्षि ने 1857 के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम में भी भाग लिया था। उनसे प्रभावित होकर भगत सिंह, राजगुरु तथा रामप्रसाद बिस्मिल इत्यादि क्रांतिकारी देश पर बलिदान हो गये थे तथ महात्मा गांधी के सत्याग्रह में भी भाग लेने वाले 80 प्रतिशत लोग आर्य समाजी थे। ऐसा डॉ. पट्टाभि सीतारमैया ने कांग्रेस के इतिहास में लिखा है। महर्षि दयानन्द ने विदेशी राज्य का विरोध करते हुए अपने ग्रंथ 'सत्यार्थ प्रकाश' में लिखा था कि– अपने देश में अपना राज्य अर्थात स्वराज्य ही उत्तम होता है, दूसरे का राज्य चाहे माता–पिता के समान सुख देने वाला हो, वह ठीक नहीं होता। आर्य नेताओं को स्वामी रामदेवजी से विचार–विमर्श करके आस्था चैनल पर प्रतिदिन कुछ समय आर्य विद्वानों के वैदिक सिद्धांतों पर उपदेश कराने चाहिए। समाज सुधार पर भी प्रवचन हों।

इस समय हमारे देश को भ्रष्टाचार से मुक्त करके उन्नति के पथ पर ले जाने की आवश्यकता है, इसलिए राजनीति का भी शुद्धिकरण करना चाहिए।पतंजलि आयुर्वेद हरिद्वार में गरीब लोगों को निःशुल्क दवाई दी जानी चाहिए।

बी–4/256–सी,
केशवपुरम, दिल्ली
फोन नं. 27101636

☞ पृष्ठ 3 का शेष

घोर घने जंगल में

पूछा, "भारत के योगी और महात्मा नगरों से दूर जंगलों में बैठे हुए क्या करते रहते हैं?" रणवीर ने कहा, "आराम से बैठकर आत्म–चिन्तन करते हैं, आत्मदर्शन करते हैं। इसमें जो आनन्द उन्हें मिलता है, उसके समक्ष संसार का प्रत्येक आनन्द, प्रत्येक सुख उन्हें तुच्छ प्रतीत होता है।" उस सज्जन ने पूछा, "परन्तु वे खाली बैठकर आत्मचिन्तन और आत्मदर्शन करते किस प्रकार हैं? हमें तो जीवन की भाग–दौड़ में अवकाश ही नहीं मिलता। प्रातः उठते हैं, तो दौड़ना शुरू करते हैं। रात को जब तक थककर, चूर होकर न सो जाएं तब तक दौड़ना जारी रहता है।" रणवीर जी ने हँसते हुए कहा, "जीवन के सम्बन्ध में आपने जो दृष्टिकोण बना रखा है वह इन योगियों और महात्माओं के दृष्टिकोण से भिन्न है। वे वास्तविकता को जानने का प्रयत्न करते हैं। उसका दर्शन करके आनन्द पाते हैं। आप छाया के पीछे भागते फिरते हो। छाया छाया है, यह वास्तविकता नहीं, अतः दौड़–भाग का कभी अन्त नहीं होता।"

यह है वेद–मार्ग को अपनाने और छोड़ने का अंतर! इसका यह तात्पर्य नहीं कि आप भी घर–बार, परिवार, कारोबार को छोड़कर जंगल में जा बैठो। नहीं, ऐसा करने की आवश्यकता नहीं। परन्तु एक बात याद रखिए कि जब तक अवास्तविकता को छोड़कर वास्तविक की ओर नहीं जाओगे, तब तक सच्चा सुख कभी नहीं मिलेगा, और वास्तविकता को जानने के लिए आवश्यक है कि स्वाध्याय करो। जो व्यक्ति प्रतिदिन स्वाध्याय करता है उसे स्वयं ही पता लग जाता है कि कौन–से रोग का सामना किस प्रकार करना है। किसी डॉक्टर के पास गये बिना ही वह अपनी चिकित्सा स्वयं कर लेता है; यह नहीं कि तनिक–सा रोग हुआ और दौड़े डॉक्टर के पास। और डॉक्टर लोग क्या करते हैं? बस इंजेक्शन, कभी टाँग में, कभी बाजू में, कभी सिर में, कभी पैर में, इंजेक्शन, इंजेक्शन इंजेक्शन– यही डॉक्टरी रह गई है। और ज्यों–ज्यों यह इंजेक्शन बढ़े हैं, त्यों–त्यों बीमारियाँ बढ़ती जाती हैं। इन बीमारियों से बचना है, तो वेद पढ़िए, स्वाध्याय कीजिए।

'वसुधैव कुटुम्बकम्' बनाम विश्व एक नीडम्

● देवनारायण भारद्वाज

अमेरिका निवासी भगिनी तथा भ्रातृगण!' यह उस अंग्रेजी सम्बोधन का हिन्दी रूपान्तर है जो स्वामी विवेकानन्द ने 11 सितम्बर 1983 को शिकागो की सर्वधर्म सभा में उच्चारित किया था। उन्होंने नारियों को पहले स्थान देते हुए सारे विश्व को अपना कुटुम्ब मानकर सम्बोधित किया था, उसका तालियों की तुमुल ध्वनि के मध्य देर तक स्वागत हुआ था। स्वामीजी को बड़ी कठिनाई से हार्वर्ड यूनिवर्सिटी के प्रो. राइट के सद्प्रयास से इस सभा में प्रवेश मिला था। विश्वबन्धुत्वपूर्ण इस सम्बोधन ने ऐसी धाक जमाई कि उसकी सभी वक्रताएं श्रद्धाकर्षण का केन्द्र बनकर वैदिक धर्म के 'वसुधैव कुटुम्बकम्' नाम को गुञ्जायमान करती चली गई। सत्रह दिनों तक चले इस 'सर्व धर्म सम्मेलन' में फिर तो अनेक–अनेक व्याख्यान हुए। उन्होंने वैदिक धर्म शास्त्रों के आधार पर एक परमेश्वर की परम सत्ता को निरूपित किया। एक ही ज्योति भिन्न–भिन्न रंग के कांच में विभिन्न रंग में प्रकट होती है। हर धर्म के मनुष्य के अन्तस्तल में उसी एक सत्य का राज है।

यह तो रही बात उस सन्त की, जिसने भारत से विदेश में जाकर विश्व को 'वसुधैव कुटुम्बकम्' के रंग में रंग दिया। अब सुनिए बात उस सन्त की, जो भारत को अपने रंग में रंगने आया था, किन्तु रंग गया भारत के रंग में। ईसाई धर्म का सन्देश भारत में फैलाने के लिए बेल्जियम में एक मिशनरी का निर्माण किया जा रहा था। इसीलिए वह अपने विद्यार्थी जीवन में एक दिन विश्व–साहित्य का अध्ययन करने बैठ गया। रामचरित–मानस की कुछ चौपाइयों ने उसके मस्तिष्क के कपाट ऐसे खोल दिए कि वह राम की वैश्विक संस्कृति का प्रवक्ता बन गया।

धन्य जनम जगतीतल तासू। पितहि प्रमोदु चरित सुनि जासू।
चारि पदारथ करतल ताके। प्रिय पितु मातु प्रान सम जाके।।

इन चौपाइयों में निहित कुल पिता एवं कुलसपूत के मार्मिक स्नेह–सम्बन्ध की झलक ने उसके मन को ऐसा मोहित किया कि यही रेवरेंड फादर कामिल बुल्के वर्ष 1935 में आए तो थे भारत में ईसाई धर्म व सभ्यता के प्रचार के लिए, किन्तु समर्पित हो गए तुलसीकृत रामचरित मानस के अध्ययन–मनन एवं अनुसंधान के लिए। एक बार ब्रिटेन से भारत आए एक ईसाई धर्म प्रचारक ने उनसे पूछा–आपको ईसा के सन्देश के लिए भारत भेजा गया था, किन्तु यहां आकर आप श्रीराम के प्रशंसक बन गए और तुलसी साहित्य के प्रचार में लग गए। आपको तुलसीदास की किस बात ने सर्वाधिक प्रभावित किया है? कामिल बुल्के ने उत्तर दिया– "तुलसीदास के अनुसार नैतिकता के अभाव में भगवद्भक्ति नितान्त व्यर्थ है, वह भगवद्भक्ति ही क्या, जो मनुष्य को सुदृढ़ कदमों से नैतिकता की ओर अग्रसर न कर दे। उन्होंने आगे कहा, "मैं राम के हृदय की करूण–भावना, उनके नैतिक मूल्यों के अनुकरण, उनकी विनयशीलता के मोहपाश में ऐसा जकड़ चुका हूँ कि वह उससे अपने को अलग नहीं कर सकता। स्वामीजी व फादर ने सम्पूर्ण वसुधा को एक कुटुम्ब ही नहीं, वेदानुसार अखिल विश्व को एक नीड़ का निवासी अनुभव किया।

अर्थात् तत्सत् ईश्वर ही एक ऐसा आश्रय है जिसमें सारा संसार समाया हुआ है। यह जगत् उसी से प्रकट या उसी में सिमटता रहता है। वही परम देव परमपिता–परमात्मा सभी प्रजाओं में ताने–बाने की भांति ओत–प्रोत हो रहा है, इतनी समीपता होते हुए भी वह सबके देखने में नहीं आता, कोई सूझबूझ वाला ज्ञानवान् उसे अपने हृदय की गुफा में देख पाता है। (यजु. 32.8), ईशोपनिषद् में "ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत्" (यजु. 40.1)। समस्त जगत् के कण–कण मे ईश्वर का वास बताया गया है, जबकि उपरोक्त मन्त्र में ईश्वर को ही सम्पूर्ण जगत् का नीड़ अथवा आश्रय स्थल बता दिया है। वही जानकार अनुभवी है जो उक्तानुसार जीव, जगत् व जगन्नियन्ता के सम्बन्ध को समझ लेता है। (अथर्व. 1.18.32)

ज्ञानी विद्वान् वही है जो परमपुरुष परमेश्वर को सबसे बड़ा ऐश्वर्यशाली सर्वोपरि मानता है, और समझ लेता है कि सभी देवता सूर्य, चन्द्र, नक्षत्र, अग्नि, वायु, आकाश आदि दिव्य शक्तियां इसमें वैसे ही ठहरी हैं, जैसे गौएं सुखपूर्वक गोशाला में रहती हैं। सूक्ष्मदर्शी विद्वान् विश्व–ब्रह्माण्ड में व्याप्त विविधता को एकरूपता में देखने लगता है। (अथर्व. 2.1.1)

वह परम–ब्रह्म सूक्ष्म तो ऐसा है कि वह (गुहा) हृदय आदि का अन्तर्यामी है और स्थूल भी ऐसा है कि सकल ब्रह्माण्ड उसके भीतर समा रहा है। धीरध्यानी महात्मा उस जगदीश्वर की अनन्त रचनाओं से विविध आविष्कार व उपहारों को ग्रहण करते हुए भी उसी एक की स्तुति करते और ब्रह्मानन्द में मगन रहते हैं। इसी वैदिक मनीषा ने हमें शुचिता की राह इस प्रकार दिखाई है।

सबके प्रति अभेद दृष्टि को ज्ञान, विषयासक्तिरहितमनकोध्यान,मानसिक विकारों के त्याग को स्नान और अपनी इन्द्रियों के संयम को शौच कहा जाता है। साधक अपनी सन्ध्योपासना में इसी ध्येय से इन्द्रियों की पवित्रता के लिए मानसिक रूप से मार्जन करते हुए– "ओं. महः पुनातु हृदये"–(स्कन्दोप. 11) पुनीत हृदय की महानता या विशाल हृदयता की अवधारणा बनाता है। संकुचित हृदय वाले अपने कुंए को समुद्र से भी बड़ा समझते हैं। विशाल हृदय वाला अपने छोटे से कुंए के मीठे जल से असंख्य पिपासुओं को तृप्त कर देता है, जो समुद्र के लवणीय पानी से कदापि सम्भव नहीं।

शिकागो की उपरोक्त सर्वधर्म सभा में 15 सितम्बर 1893 को ऐसा ही संयोग उपस्थित हो गया था, जब भिन्न–भिन्न धर्मावलम्बी अपने–अपने मत की प्रधानता का प्रतिपादन करने के लिए वितण्डावाद में जुट गये थे, तब स्वामी विवेकानन्द ने एक कहानी सुनाकर सभी को शान्त कर दिया। उन्होंने सुनाया कि एक कुंए में बहुत समय से एक मेंढक रहता था। वह वहीं पैदा हुआ और वहीं उसका पोषण हुआ और वह मोटा–ताजा हो गया। होते–होते एक दिन दूसरा मेंढक जो समुद्र में रहता था, वहां आया और कुएं में गिर पड़ा। कूपमण्डूक ने उससे पूछा, "तुम कहां से आये हो?" मैं समुद्र से आया हूं, उसने उत्तर दिया। "समुद्र कितना बड़ा है? क्या इतना ही बड़ा है जितना मेरा यह कुआँ है?" यह कहते हुए उसने कुएं में छलांग मारी। समुद्र वाले मेंढक ने कहा, "मेरे मित्र भला समुद्र की उपमा इस छोटे से कुएं से किस प्रकार दी जा सकती है?" तब उस कूपमण्डूक ने दूसरी छलांग मारी तथा पूछा– "तो क्या इतना बड़ा है?" समुद्र वाले मेंढक ने कहा– "कुंए ही तुलना समुद्र से करना असम्भव है।" अब तो कूपमण्डूक जी चिढ़कर बोले– "जा, जा! मेरे कुंए से बढ़कर और कुछ हो ही नहीं सकता। झूठा कहीं का! अरे इसे पकड़कर बाहर कर दो। स्वामीजी ने इस कथा के माध्यम से मतमतान्तरों की संकीर्ण भावना को उजागर कर दिया था।

रामायणकालीन भ्राताओं का अवलोकन करें तो बाली–सुग्रीव प्रतिशोधात्मक वानरी प्रकृति में, रावण–कुम्भकरण–विभीषण विरोधात्मक निशाचरी विकृति में और राम, लक्ष्मण, भरत, शत्रुघ्न सम्बोधनात्मक वैश्वानरी संस्कृति में रचे–बसे दिखाई देते हैं।

अनुजवधू भगनी सुतनारी। सुन सठ कन्या सम ए चारी।। का उपदेश कर राम बाली को मार देते हैं। मरते–मरते भी बाली अपने पुत्र अंगद का हाथ राम के हाथों में थमा देता है। स्वर्णमयी सुविधासम्पन्न लंका से पलायन कर विभीषण राम की शरण में आ जाते हैं। राम तब सर्व रामानुज भ्रातृत्व का शृंगार बनकर राज्य सिंहासन को गेंद की भांति ठुकराने में क्षण भर की देर नहीं लगाते हैं। सुनीति–मर्यादा से सकुल राम के कुल में गिरिवासी, वनवासी, ग्रामवासी, आश्रमवासी और गुफावासी सभी मिलने को आतुर दिखाई देते हैं, क्योंकि उन सबको लंकावासी विभीषण के शब्दों में व्यक्त प्रेरणा राम के चरित्र में झलकती दिखाई देती है।

श्रवण सुजसु सुनि आयउँ प्रभु भञ्जन भवभीर।
त्राहि त्राहि आरति हरन सरन सुखद रघुवीर।।

शरीर क्रिया विज्ञान के अनुसार हर मनुष्य का हृदय आकार–प्रकार–कार्य व्यवहार में समतुल्य होता है, किन्तु भावनाओं की तरंगें ही उसे लघु अथवा विशाल बना देती हैं।

यादृशी भावना यस्य सिद्धिर्भवति तादृशी।। (पञ्चतन्त्र)

अर्थात् यही भावनाएं ही मानव के लक्ष्य–सिद्धि की मूलाधार होती हैं। पण्डित विष्णु शर्मा ने अपने विश्व–प्रसिद्ध बाध–कथा ग्रन्थ 'पञ्चतन्त्र' में 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की स्थापना बहुत ही सरल शैली में इस प्रकार की है:–

अयं निजः परो वेत्ति गणना लघुचेतसाम्।
उदारचरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम्।।

अर्थात् अपने व पराये की गणना छोटे हृदयवाले करते हैं।

शेष पृष्ठ 8 पर ☞

मैंने समावर्त्तन संस्कार को समझा

● खुशहाल चन्द्र आर्य

यह मेरा बड़ा सौभाग्य रहा कि मेरे परिवार की अभिलाषा से विशेषकर मेरे सब से छोटे सुपुत्र चि. राजेश आर्य की सद्इच्छा से हमने 25 से 28 दिसम्बर 2011 तक राजेश के ही फ्लेट स्वप्नलोक (हाबड़ा) में पारिवारिक सत्संग किया। इसमें मेरा पूरा परिवार यानि मेरे चार सुपुत्र चि. विनोद आर्य, है। चि. प्रमोद आर्य, चि. दिनेश आर्य चि. राजेश आर्य, और एक सब से बड़ी सुपुत्री इन्दु बाला सभी बच्चे अपने पूरे परिवार सहित इस पारिवारिक सत्संग में शामिल हुए और बड़े उत्साह व उल्लास के साथ सत्संग का आनन्द लिया। इस पारिवारिक सत्संग को सुचारू रूप से यानि वैदिक रीति से चलाने के लिए हमने फर्रूखाबाद से आदरणीय आचार्य चन्द्रदेव जी शास्त्री को बुलाया था। वे 25दिसम्बर को ठीक प्रातः छः बजे अपने ही गुरुकुल के तीन ब्रह्मचारी तथा आदरणीय योगेश जी शास्त्री ने करवाया, बाद में अनको गारोलिया में लड़कियों का प्रशिक्षण शिविर चल रहा था उसमें जाना पड़ गया इसलिए बाकी तीन दिन का प्रातः योग शिविर का तथा नौ बजे यज्ञ का कार्यक्रम तीनों ब्रह्मचारियों ने चलाया और कार्यक्रम चार दिनों का इसी भाँति चला।

प्रातः छः बजे से नित्य व्यायाम, आसन, प्राणायाम आचार्य योगेश जी या ब्रह्मचारियों द्वारा करवाया जाता था। फिर आठ–साढ़े बजे प्रातः रस में दूध वदलिया दिया जाता था । तत्पश्चात् नौ बजे छोटे बच्चे तथा बहुएँ ईश्वर क्या है, उसने सृष्टि क्यों रची, पंच महायज्ञ क्या है, इनकी गृहस्थ में क्या उपयोगिता है, गृहस्थ सुखी कैसे रह सकता है आदि प्रश्न आचार्य चन्द्रदेव जी से करती थीं और आचार्य जी उसका स्टीक उत्तर देते थे जिससे पूछने वाले को सन्तोष होता था। ब्रह्मचारियों में एक ब्रह्मचारी भजन भी अच्छे गाता था। हारमोनियम की व्यवस्था घर में थी इसलिये ब्रह्मचारी से भजन भी सुना करते थे। बेटी इन्दुवाला ओर उसकी माता जी को आर्य समाज के पुराने भजन बहुत याद हैं। उन्होंने पुराने भजन बहुत सुनाये जिनको सुनकर सभी लोग भावुक हो जाते थे और महर्षि दयानन्द के प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट करते थे। आर्य समाज के सत्संग की काफी पुस्तकें ला रखी थीं। बहुत सदस्य उन पुस्तकों में पढ़कर भी भजन सुनाते रहते थे। मैं भी बीच–बीच में बच्चों व बहुओं से महर्षि दयानन्द, आर्य समाज और वैदिक सिद्धान्तों के सम्बन्ध में पूछता रहता था तथा अपने विचार भी सुनाता रहता था। कभी–कभी बातावरण को सरस बनो के लिए कविता भी सुना देता था। सभी बच्चों को अपनी शंकाऐ पूछने की छूट थी जिससे माहैल बड़ा प्रसन्नता पूर्ण बनाने रहता था। चि० दिनेश व राजेश भी अपने–अपने विचार रखते रहते थे। धर्म चर्चा दो पहर के एक बजे समाप्त हो जाती थी। तत्पश्चात् हल्का सात्विक भोजन होता था । फिर डेढ़– दो घण्टों के विश्राम के बाद कुछ देर धर्म चर्चा के बाद फिर लगभग सांय छः बजे सामूहिक संन्ध्या होती थी। फिर आचार्य चन्द्र देव जी का एक सवा घण्टे का बड़ा ही सार गर्भित उपदेश किसी भी एक विषय पर होता था। फिर बच्चें को किसी विषय को समझाया जाता था औ फिर उसी विषय पर प्रश्न पूछे जाते थे। इस प्रकार बच्चों के ज्ञान की वृद्धि की जाती थी। किसी–किसी दिन मनोरंजन के लिए ''मैमोरी'' यादास्त का खेल खेता जाता था जिसमें 18–20 वस्तुएँ रखकर उन्हें दिखा दिया जाता था। फिर एक पन्ना व पेन देकर उनसे उन वस्तुओं के नाम लिखने को कहा जाता था। सब बच्चे अपनी स्मरण शक्ति से उन वस्तुओं के नाम लिखते थे जिन तीन बच्चों के क्रमशः अधिक से अधिक नाम ठीक मिलते थे उन्हें पुरस्कृत किया जाता था। इससे प्रसन्नता का माहौल बनाने में बड़ा सहयोग मिलता। इसके बाद शाम के भोजन के बाद कार्यक्रम समाप्त हो जाता था।

अब मैं विषय की गहराई में जाता हूँ। मुझे समावर्त्तन संस्कार के बारे में काफी भ्रान्तियाँ थीं मेरे मन में इस संस्कार के सम्बन्ध में ब्रह्मचारी, गुरुकुल में अपने आचार्य के पास रहकर पूरी विद्या प्राप्त करके जब अपने घर जाने के लिए प्रस्थान करता था। उनके घर वाले उसे लेने आते थे, तब यह समावर्त्तन संस्कार किया जाता था। आचार्य, उसे अपने भविष्य में क्या करना है और क्या नहीं करना है तथा उसे अपना जीवन कैसे बिताना है, यह शिक्षा देता था । और उसका वर्ण निर्धारित करता था। कारण ब्रह्मचारी कई वर्षो तक आचार्य की गोद में पला है।, इसलिए आचार्य उसके अच्छे–बुरे गुण कर्म स्वभाव से परिचित हो जाता है। यदि उसमें अधिक गुण ब्राह्मण के हैं तो उसको ब्राह्मण, यदि क्षत्रिय के गुण अधिक हैं तो क्षत्रिय, वैश्य के गुण अधिक हैं तो वैश्य और यदि शुद्र के गुण अधिक है शूद्र घोषित कर देते हैं और इसी आधार पर उस बच्चे को उसी वर्ण के परिवार से आया, वह पढ़ाने से भी नहीं पढ़ सका, तो आचार्य उसे शूद्र घोषित कर देता है। तो वह बच्चा अपने घर तो जा नहीं सकता और उसे किसी शूद्र परिवार में देना पड़ेगा। अब समस्या यह आयेगी कि उस बच्चे को जिस माँ–बाप ने पैदा किया था, आठ साल उसे पाला–पोसा था, तो वह अपने बच्चे को कैसे दूसरे के परिवार में दे देगा। बच्चा भी नये शूद्र परिवार में कैसे अपने आपको उनमें मिला–जुला सकेगा। उन नये माँ–बाप में कैसे श्रद्धा बनेगी और उन माँ–बाप का उस बच्चे में कैसे प्यार आवेगा तथा बच्चा भी उनके साथ कैसे शूद्र का काम कर सकेगा। यह व्यवस्था मेरी समझ में नहीं आ रही थी। इसी को जानने के लिए मैने यह समस्या आचार्य चन्द्र देव जी के सामने रखी। उन्होंने इतने सुन्दर ढ़ंग से समझाया कि समावर्त्तन संस्कार में बच्चे का वर्ण तो आचार्य ही निर्धारित करता है, साथ ही उसका विवाह भी जिस कन्या गुरुकुल की लड़की से उसके अधिक से अधिक गुण, कर्म, स्वभाव मिलते होंगे, उस लड़के व लड़की के समावर्त्तन एवं विवाह दोनों संस्कार आचार्य ही करवा देगा। लड़का–लड़की पति–पत्नी के रूप में लड़के के घर में ही लड़के के माता पिता के पास ही रहेंगे। पर लड़का अपना शूद्र का काम अलग करता रहेगा और उसकी सन्तान शूद्र कहलाती रहेगी। इस व्यवस्था से किसी को भी किसी प्रकार की तकलीफ या कोई समस्या नहीं आयेगी। लड़का अपने माता–पिता की तथा बहु अपने सास–ससुर, की सेवा उसी प्रकार करती रहेगी जैसे हर परिवार में होती है। माँ–बाप भी अपने बच्चे व बहु को वैसा ही प्यार देंगे जैसा समान वर्ण में दिया जाता है। आचार्य जी के यह समझाने से मुझे बड़ा सन्तोष मिला और समावर्त्तन संस्कार को सही रूप में समझ पाया इससे परिवारों में कोई व्यवधान या अड़चन नहीं आती है। यही स्थिति प्रत्येक वर्ण के बदलने में रहेगी। इस उपकार के लिए मैंने आचार्य जी को बहुत–बहुत धन्यवाद किया तथा अपने हाथों से उनके प्रति आभार व्यक्त किया।

180 महात्मा गांधी रोड़ (दो तल्ला)
कोलकता –700007

☞ पृष्ठ 4 का शेष

तीर्थ

कर्म का फल अवश्य भोगना पड़ता है यानि यदि हम दुख सागर से तरना या पार होना चाहते हैं तो केवल परोपकार के यज्ञीय सद्कर्मो के द्वारा ही हो सकते हैं।

दुःखों से तारने वाले शुभ कर्मों की व्याख्या करते हुए **सत्यार्थ प्रकाश** के 11वें समुल्लास में देव दयानन्द लिखते हैं– **"वेदादि शास्त्रों का पढ़ना–पढ़ाना, धार्मिक विद्वानों का संग, परोपकार, धर्मानुष्ठान, योगाभ्यास, निष्कपट, सत्यभाषण, सत्य का मानना, सत्य करना, ब्रह्मचर्य, आचार्य, अतिथि, माता–पिता की सेवा, परमेश्वर की स्तुति, प्रार्थना, उपासना, शान्ति, जितेन्द्रियता, सुशीलता, धर्मयुक्त पुरुषार्थ, ज्ञान–विज्ञान आदि शुभ–गुण–कर्म दुःखों से तारने वाले होने से तीर्थ कहलाते हैं।** यजुर्वेद में तीर्थ की व्याख्या इस प्रकार से है–

नमस्तीर्थ्याय च।। यजुर्वेद 16/42

जो वेदादि शास्त्र सत्य धर्म लक्ष्णों से युक्त हो उसको अन्नादि पदार्थ देकर शिक्षा लेना तीर्थ कहलाता है।

नदियों के किनारे बसने वाली प्राचीन सभ्यताओं में पुरातन सनातन शिक्षा पद्धति के रूप में गुरुकुलीय शिक्षा प्रणाली थी जहां ब्रह्मचारी विद्यार्थी गुरुकुल में रहकर आचार्यों से शिक्षा ग्रहण करते थे। शायद इसलिए नदी किनारे ही कालान्तर में तीर्थों के नाम से जाने जाने लगे। इन गुरुकुल रूपी तीर्थों में विद्यार्थी विद्यादि शुभ गुणों, आर्य संस्कारों को ग्रहण कर सब सत्य विद्याओं का ज्ञान प्राप्त कर वेदादि शास्त्रों का अध्ययन कर पृथ्वी से ईश्वर पर्यन्त सभी पदार्थों का सत्यस्वरूप जानमान कर परोपकार करते हुए जीवन के लक्ष्य, मोक्ष वा मुक्ति को प्राप्त करने का प्रयास करते थे। कालान्तर में जब सभी प्रक्रियाओं का अपने तुच्छ स्वार्थों के कारण पोंगे पंडितों ने सरलीकरण किया, तो नदियों में स्नान कर पाप निवारण करते हुए मोक्ष तक इसे सीमित कर दिया। नदियों में स्नान करने से हम शारीरिक स्वच्छता की आशा तो कर सकते हैं, परन्तु मन–बुद्धि–आत्मा की शुचिता तो केवल वेदादि शास्त्रों के अध्ययन, अनुकरण, विद्या से ही आ सकती है। नदियों–तालाबों में सामूहिक स्नान से पाप निवृति तो नहीं हो सकती, परन्तु संक्रामण रोग फैलने का खतरा जरूर होता है।

इससे यह निर्विवाद रूप से सिद्ध होता है, कि दुःख सागर से तारने वाले यज्ञीय परोपकार के कार्यों का नाम ही तीर्थ है, ना कि स्थान या नदी का विशेष का नाम।

502, जी एच 27, सैक्टर–20, पंचकूला
मो. 09467608686

'वे दिन–वे लोग' पाचवीं किश्त

● डॉ. अनिरुद्ध भारती

आज से लगभग 60 पहले अंग्रेजी पत्र 'ट्रिब्यून' में A Centuary of Sanyas नामक शीर्षक से एक लेख छपा था, उसी का एक अनुच्छेद यहाँ प्रस्तुत है:– He was a friend of revolutions. Bhagat Singh, Chandra Shekhar Azad, Ashfaqulla Khan and Ram Prasad Bismil used to come to him in the Jungle Ashram in Meerut district where Hindon-aerodram is now located. Mr. Lal Bahadur Shastri who was then a teacher and Mr. Charan Singh Secretary of the Arya Samaj Ghaziabad. who came to him for discussions.

यह लेख आर्य समाज के दिग्गज प्रचारक, मन, वचन, कर्म से ऋषि दयानन्द के अनुयायी, ओजस्वी वक्ता, देश भक्ति की कविताओं के रचयिता, वैदिक सिद्धान्तों के मर्मज्ञ श्री स्वामी भीष्मजी के विषय में लिखा गया था। स्वामीजी केवल धार्मिक या समाज सधारक नेता ही नही थे, अपितु तत्कालीन ब्रिटिश–शासन विरोधी क्रान्तिकारियों के भी समर्थक, सहायक तथा आश्रयदाता भी थे। जैसा कि ट्रिब्यून में छपे इस लेख से भी प्रत्यक्ष है।

यह आश्रम, एक कुटिया के रूप में मोहननगर के सामने वहाँ से लगभग डेढ़–दो किलोमीटर के फासले पर करहैड़ा ग्राम में हिन्डन नदी के कछार में स्थित था, जो अब प्रायः ध्वस्त हो चुका है, इस लेख में स्वामीजी के जीवन की दो घटनाओं के विषय में प्रकाश डाला जाएगा।

पहली घटना: यह सन् 1965 की बात है। तब भारत–पाक युद्ध चल रहा था और प्रधानमंत्री थे, श्री लाल बहादुर शास्त्री। स्वामीजी राष्ट्रीय सुरक्षा कोष में धन जमा करने के सम्बन्ध में श्री शास्त्री जी से भेंट करने गये थे। वहाँ जाकर देखा तो प्रधानमंत्री निवास पर भारी भीड़ थी। स्वामीजी वहाँ जाकर एक तरह खड़े हो गये। संयोग की बात प्रधानमंत्री के निजी सचिव श्री आर.के. गोयल स्वामीजी के पूर्व परिचित थे। उन्होंने श्री शास्त्रीजी से जाकर कहा– 'स्वामी जी आये हैं।' प्रधानमंत्री जी ने पूछा, 'कौन से स्वामी जी?' पी.ए. ने बताया कि 'आर्योपदेशक स्वामीजी। श्री शास्त्रीजी को पुरानी याद आई, वे तुरन्त उठकर आये और बड़े प्रेम से स्वामीजी से मिले। प्रधान मंत्री जी ने कहा– 'स्वामी जी मैंने आपको पहचान लिया है, पर मैं तो उस समय बहुत छोटा था जब आपसे भेंट करने आपके आश्रम पर जाया करता था। यह बात तो बहुत पुरानी हो गई है। (ये मुलाकातें लगभग सन् 1927–30 के दौरान होती थीं) मैंने तो सोचा था कि आपका स्वर्गवास हो चुका होगा। स्वामीजी इस बात को सुन कर हँसे और बोले– 'शास्त्रीजी भला हम आर्य भी कभी मरते हैं?' इस कथन को सुनकर वहाँ उपस्थित सभी लोग काफी देर तक हँसते रहे। शास्त्रीजी ने स्वामी जी के साथ फोटो खिंचवाई और कहा– 'स्वामीजी जब भी इच्छा हो अवश्य आइएगा।' कुछ समय पश्चात् उनके निधन पर स्वामीजी काफ़ी भावुक हो उठे थे और विह्वल होकर उन्होंने कहा–'एक ईमानदार, सच्चा देशभक्त, तपस्वी नेता संसार से चला गया, उसकी जगह अब नहीं भर सकती।'

दूसरी घटना: यह उन दिनों की बात है जब देश में राजनैतिक गतिविधियाँ तेजी से चल रही थीं। देश के सभी बड़े–बड़े नेता समय–समय पर दिल्ली आकर जन सभाओं को सम्बोधित करते थे। एक बार जब सुभाष बाबू दिल्ली पधारे, तो उनसे मिलने के लिए स्वामीजी बेताब हो उठे। रातोरात एक कविता लिखी और अगले दिन उनकी सभा में पहुँचकर एक कार्यकर्ता के द्वारा वह कविता सुभाष बाबू के पास भिजवा दी। सुभाषजी ने कविता पढ़ी और स्वामीजी को बुलवाकर अपने पास कुर्सी पर बैठाया। बाद में कहा कि स्वामीजी इस कविता को आप ही सभा में पढ़कर सुनाइए। स्वामीजी ने अपनी गर्जती आवाज में कविता पढ़ी जिसकी पँक्तियाँ इस प्रकार हैं:–

'जवानी सफल होती है फौज तैयार करने से।

देश आजाद होता है प्राण बलिदान करने से।

जन्मभूमि के कारण जो अमर बलिदान देते हैं।

वतन की आन पर अपनी वो हँसकर जान देते हैं।।

जवानी सफल होगी बमों की मार करने से।

जालिम के जुल्मों का किला बिस्मार करने से।।

जवानो! शहीदों में तुम्हारा नाम देते हैं।

इस देश का तुम्हें इन्तजाम देते हैं।।

दुश्मन की हस्ती को मिटा दो ये काम देते हैं।

एकदम बगावत का तुम्हें पैग़ाम देते हैं।।'

इस कविता को जनता द्वारा बार–बार सुनने की माँग की गई। सुभाष बाबू ने खड़े होकर स्वामीजी की प्रशंसा करते हुए धन्यवाद दिया और कहा कि, 'स्वामी जी, कुछ पँक्तियाँ देश के नौजवानों के लिए और सुनाइए, क्योंकि उन्हें प्रेरणा देने की आज बहुत आवश्यकता है।'

तब स्वामीजी ने यह कविता सुनाई थी:–

'जवानो! तुम्हारी जवानी कहाँ है?

तुम्हारी वीरता वो पुरानी कहाँ है?

जिसे आस्माँ के सितारों ने देखा,

जिसे आजमा के हज़ारों ने देखा,

तुम्हारी वो जोश–ए–जवानी कहाँ है?'

देश की आजादी के लिए जोश पैदा करने के लिये उस समय ऐसी ही कविताओं की आवश्यकता थी। आज भी इनमें वही शौर्य, वीरता और जोश झलकता है।

शायद स्वामीजी की कार्य प्रणाली को देखकर ही किसी शायर ने लिखा है :–

'न वो तकदीर होती है, न वो तहरीर होती है,

जो होती है तो हर बात बे–तासीर होती है।

न वो लेखक रहे अब तो–न वो तकरार बाकी है,

इस गुलशन के गुल मुरझा गये अब खार बाकी है।।

आर्य पी.जी. कॉलेज, पानीपत–132103
मो.: 099960–23046

☞ *पृष्ठ 6 का शेष*

'वसुधैव कुटुम्बकम्' बनाम...

उदात्त चरित्रवालों के लिए तो सारी वसधा ही अपने कुटुम्ब के समान होती है। उन्होंने इसकी पुष्टि में जो कहानी सुनायी है, वह अत्यन्त मार्मिक व शिक्षाप्रद है– किसी नगर में चार ब्राह्मण पुत्र निवास करते थे। उनमें से तीन यद्यपि शास्त्रज्ञ थे, किन्तु बुद्धिविहीन थे। शेष एक विद्वान् तो नहीं था, किन्तु लोक–व्यवहार में निपुण होने से बुद्धिमान माना जाता था। वे चारों धनोपार्जन के लिये यात्रा पर निकल पड़े। मार्ग में सबसे बड़े भाई ने विद्याविहीन होने के कारण छोटे भाई को आगे साथ ले जाने से मना कर दिया। दूसरे भाई ने भी बड़े भाई का समर्थन किया। दोनों ने सोचा कमाएंगे हम और खाएगा छोटा भाई। तब तीसरे भाई ने अपने दोनों बड़े भ्राताओं को समझाया। बाल्यकाल से हम सब साथ खेले–खाये हैं, फिर अपने ही काम आने वाली लक्ष्मी से क्या लाभ? अपन–पराये का विचार तो सकुचित भावना वाले करते हैं। उदार व्यक्तियों के लिए तो सारा विश्व ही अपना होता है– वह तो हमारा सहोदर भाई है। अगले दिन वे चारों वन के मार्ग से जा रहे थे, तो उन्हें हड्डियों का ढेर दिखाई दिया। एक भाई ने हड्डियों को व्यवस्थित कर पशु का कंकाल खड़ा कर दिया। दूसरे भाई ने अपनी विद्या के प्रभाव से उसमें चर्म, मांस व रक्त का संचार कर दिया। अपनी विद्या के गर्व में चूर तीसरा भाई उसमें प्राणों का संचार करने को उद्यत हुआ, तो चौथे भाई ने उसे रोकते हुए कहा, "तुम लोग देख रहे हो, यह कौन–सा जीव है? तुम लोग मरे हुए सिंह को जीवित कर रहे हो।" तीसरा भाई कहने लगा, "अरे मूर्ख! इन दोनों ने अपनी विद्या का चमत्कार दिखा दिया है। मैं भी अपनी विद्या को विफल नहीं होने दूंगा।" चौथे भाई ने कहा, "यदि यही बात है तो मुझे वृक्ष पर चढ़ जाने दो, फिर अपनी विद्या का प्रयोग करना।" तीसरे भाई द्वारा प्राणों का संचार करते ही सिंह अंगड़ाई लेकर उठा और तीनों को अपने आहार का ग्रास बना लिया। बोध कथा का यही सन्देश है कि संकीर्ण भावनाएं बसे बसाये परिवार का सर्वनाश कर देती हैं और उदात्त भावनाओं से सारा संसार ही अपना कुटुम्ब बन जाता है। इन उत्तुंग भावनाओं का अजस्र उत्स मानव हृदयस्थ वही प्रभु–नीड़ है, जिसके आश्रम में रहकर हम सभी सकारात्मक तरंगों के संस्पर्श से एक ही कुटुम्ब का अंग बन जाते हैं।

'वरेण्यम्', अवन्तिका (ए.डी.ए1)
अलीगढ़–202001 (उ.प्र.)

आर्य – हिन्दू धर्म की प्रखरतम विदेशी महिला प्रवक्ता : सावित्री देवी

● हरिकृष्ण निगम

प्रसिद्ध ब्रिटिश इतिहासकार निकोलस गुडरिक–क्लार्क के अनुसारग्रीक–अंग्रेज मूल की फ्रांसीसी महिला सावित्री देवी जिनका मूल नाम मैक्सीमियानी पोर्टास था, उन्होंने कोलकाता को अपना स्थायी आध्यात्मिक निवास मानकर जीवन में पूरी तरह हिन्दू आस्था को अपना लिया था, उन्हें यद्यपि आज भी नाज़ी विचारधारा से सहानुभूति दिखाने वाली विवादित महिला माना जाता है पर इसके मूल में प्रचारित एक और भी धारणा थी। वे एडोल्फ़ हिटलर को एक समय "विष्णु के अन्तिम कल्कि अवतार" के रूप में भी मानती थीं। उनका जीवन रहस्यमय रहा और आर्यों की श्रेष्ठता के सिद्धान्त को वे वस्तुतः हिन्दू धर्म से जोड़ती थीं और नौर्डिक मूल की कथित श्वेत जातिवाद की अवधारणा में विश्वास करने की बात उन पर थोपी गई थी। वे आर्यवाद के सिद्धान्त का रूपान्तरित स्वरूप हिन्दू धर्म के वैचारिक मूल धार के रूप में खड़ा करना चाहती थीं। पहले अंग्रेजी लेखकों ने फिर स्वयं हमारे देश के बुद्धिजीवियों ने उन्हें संकीर्ण और नक्सलवादी कहकर उनकी छवि को धूमिल करने का प्रयास किया था।

उस समय सनसनी मच गई थी जब सन् 1982 में टोरन्टो – स्थित नवनाजी प्रकाशन–गृह के संस्थापक अर्नेस्ट जुन्डेल ने घोषित किया था कि उन्होंने सावित्री देवी की तब अप्राप्य और दुर्लभ पुस्तक "दि लाइनिंग एण्ड दि सन" से सम्बन्धित पांच साक्षात्कारों की पांच घंटे की रिकॉर्डिंग के दो कैसेट तैयार किए है। उन्होंने यह भी वक्तव्य दिया था कि उनका उपयोग प्रकाशन जगत की एक बड़ी घटना हो सकती है। यह घोषणा विज्ञापन के एक मेलर या पर्चे के रूप में पश्चिमी देशों में प्रचारित हुई थी।

अर्नेस्ट जुन्डेल ने एक सनसनीखेज लहजे में लिखा था – "हिटलर के कष्ट का प्रकटीकरण! भारत में आज भी जीवितः हिटलर की पुजारिन; अब आप रिकार्ड किए गए कैसटों का पूरा सेट खरीद सकते हैं जिसमें सावित्री देवी के भारत में घर पर दिए गए प्रत्यक्ष साक्षात्कारों का संकलन टेप पर है। "मूल अंग्रेजी में शीर्षकों में उत्तेजना थी जैसे – हिटलर कष्ट रिवील्ड डिस्कवर्ड एलाइव इन इण्डिया – हिटलर्स गुरु सावित्री देवी" आदि–आदि! यह उसी वर्ष की बात है जब सावित्री देवी की मृत्यु इंगलैण्ड में हुई थी। 22 अक्तूबर, 1982 में इगलैण्ड के एसेक्स नामक स्थान पर वे दिवंगत हुई थीं। जब इतिहासकार निकोलस गुडरिक – क्लार्क ने उपर्युक्त कैसेट के विज्ञापन को दिया था। वे दक्षिणी ब्रिटेन की एक्सीटर यूनीवर्सिटी में पाश्चात्य–गुह्याचार व तेनमकं इसोटेरीसिज्म– के व्याख्याता थे और जिन्होंने आकल्टज़्म – ढ़ाचार व गुप्त दीक्षा – और नाज़ी राजनीति के अन्तर्सम्बन्धों के इतिहास पर कई शोधग्रंथ लिखे थे। उन्हें इस बात पर आश्चर्य हुआ कि एक हिन्दू – 'ऑकल्टिस्ट' तंत्राचारी किस प्रकार नाजियों की धार्मिक विचारधारा को स्वतंत्रता के पहले के भारत में प्रचारित कर रही थी। यह उन्हें विस्मित कर रहा था। वैसे सारी दुनिया जानती थी कि हिटलर एक कट्टर ईसाई था और स्वयं उसने अपनी आत्मकथा 'माइन काम्फ़' में वह लगभग 200 पृष्ठ मात्र ईसाईयत और चर्च की यहूदियों के षड्यंत्रों से रक्षा के लिए प्रतिबद्धता दिखा चुका था। यहूदियों से चर्च को कैसे बचाया जाए, यह मिशन उसकी आत्मकथा में विस्तार से वर्णित है। वेटिकन का भी हिटलर को सदैव प्रच्छन्न समर्थन था और यहां तक कि पोप बाद तक यहूदियों के रक्तरंजित नरसंहार या 'होलोकास्ट' को अतिश्योक्तिपूर्ण व झूठा कहते थे। हिटलर के पहले के ईसाई समर्थन को साफ़–साफ़ न कह कर पश्चिम में उसकी आक्रामक अतिरेकी नीति के लिए नाजीवाद शब्द ही प्रचारित किया गया, न कि ईसाई कट्टरवाद–प्रसूत यहूदी विरोधी रक्तपात व हिंसा।

इतिहासकार गुडरिक–क्लार्क ने हिटलर की विचारधारा की जड़ों में हिन्दू दर्शन और उसके आध्यात्मिक देशी और विदेशी आस्थावानों के रुझानों को खोज निकाला। उसने "नाज़ी अवधारणा की व्याख्या के पीछे हिन्दू आस्था" – यह नया नारा बना डाला। इसी इतिहासकार ने एक ग्रंथ न्यूयार्क यूनीवर्सिटी प्रेस से प्रकाशित किया जिसका शीर्षक ही हिन्दू धर्म को लांछित कर रहा था। शीर्षक था– "हिटलर्स प्रीस्टेस : सावित्री देवी, द हिन्दू आर्यन मिथ एण्ड नियो – नाजिज्म।"

फिर क्या था हमारे देश में वामपंथियों के दुराग्रहों ने उसे नवनाजीवाद के उदय से जोड़ा और क्योंकि उसका निजी तौर पर पूरी तरह से हिन्दू आस्था में विश्वास था इसलिए देश के हिन्दू संगठनों से जोड़कर उन्हें हिन्दू साम्प्रदायिकता की विदेशी जननी भी कहा गया था।

सावित्री देवी का जन्म फ्रांस के लियोस शहर में 30 सितम्बर, 1905 में हुआ था। सन 1932 में अपने पिता की मृत्यु के बाद वे भारत में रहने आ गई और हिन्दू जाति–व्यवस्था उनके विशेष अध्ययन का विषय तो था ही उन्होंने सुजनन–विज्ञान या 'यूजेनिक्स' पर भी शोध किया था। 27 वर्ष की अवस्था में उन्होंने यहां स्नातक की दो विषयों में डिग्री ली और फिर रामेश्वरम पहुंच गईं। भारत को तो वे अपनी मातृभूमि ही मानने लगी थीं।

सन् 1935 में वे रवीन्द्रनाथ ठाकुर के बेलपुर– स्थित आश्रम में कुछ समय तक रहीं, जहाँ उन्होंने हिन्दी सीखी और बंगला में तो वे अत्यन्त पारंगत थी जिसका विद्वानों में भी लोहा माना जाने लगा। उनके ऊपर लोकमान्य तिलक का भी गहरा प्रभाव पड़ा था। सावित्री देवी ने यही बालगंगाधर तिलक का 'द आर्कटिक होम आफ द वेदाज़' नामक ग्रंथ पढ़ा जिसने उन्हें अत्यन्त प्रभावित किया था। भारतीय संस्कृति व हिन्दू रीति–रिवाजों से प्रभावित होकर सन् 1936 में उन्होंने अपना नाम सावित्री देवी रखा था और उसके पहले तक वे सदैव मैक्सिमियानी पोर्टास ही कहलाती थीं। अपनी एक पुस्तक "लोटस पोन्ड" जो मूल रूप से फ्रांस में ही लिखी गयी थी उसमें उन्होंने अपने बनारस, लाहौर, मथुरा और वृन्दावन के अनुभवों का भावपूर्ण वर्णन किया था। सन् 1936 में पूरी तरह एक भद्र बंगाली महिला की तरह वे कलकत्ते में स्थायी रूप से रहने लगी थीं।

शान्ति निकेतन में सावित्री देवी मार्गरेट स्पीगेल नामक बर्लिन में रहने वाली महिला से मिलीं जो रवीन्द्रनाथ ठाकुर की निजी सचिव की तरह काम करती थीं और बाद में अमला बहन कहलाई थीं। शायद यहूदी मूल की होने के कारण वे सावित्री देवी के विचारों से सहमत नहीं थीं क्योंकि उनका आर्यों का जातिवादी वर्चस्व का सिद्धान्त उनके गले नहीं उतरता था। सावित्री देवी आर्यों की श्रेष्ठता का सिद्धान्त हिन्दू धर्म से अधिक जोड़तीं थी न कि जर्मन नाज़ियों से, जिन्हें वे कट्टर ईसाई और संकीर्ण राष्ट्रवादी मानती थीं। सावित्री देवी का आर्यवाद का सिद्धान्त कुछ रूपान्तरित हो रहा था। उनकी सबसे बड़ी चिन्ता "आर्यन" डम के मूलाधार के रूप में हिन्दू धर्म को खड़ा करना और उसको पूरा समर्थन देना था जो उनके अनुसार ईसाइयत और इस्लाम की चोटें झेल रहा था। यह "क्रिस्टेन्डम" की अवधारणा को उनका उत्तर था। 40 के दशक में सावित्री देवी ने देश के अन्दरूनी आन्दोलनों को अनदेखा कर आर्य–विरासत का झण्डा उठाया जिसके, कारण कुछ अंग्रेज लेखकों ने उन्हें संकीर्ण और नस्लवादी कह कर बदनाम किया।

उस समय उन्होंने वृहद हिन्दू राष्ट्रवादी आन्दोलन को, जो हिन्दू महासभा व राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के साथ–साथ डा. अम्बेडकर के दलितों को संगठित करने के रूप में भी था, खुलकर समर्थन दिया। सन् 1937 में उन्होंने हिन्दू महासभा के अध्यक्ष स्वामी सत्यानन्द को कलकत्ते में पूरा सहयोग दिया। एक बार जब उनसे उनकी धार्मिक आस्था के बारे में प्रश्न किया गया, उन्होंने कहा वे आर्य हैं और उन्हें इस बात का अत्यन्त खेद है कि यूरोप को ईसाई मतावलम्बी बना दिया गया है। सावित्री देवी ने वीर सावरकर और डॉ. हेडगेवार के ग्रन्थों का अध्ययन किया था और उनकी प्रशंसक भी थीं। उन्होंने 'ए वारनिंग टु द हिन्दूज' नामक ग्रंथ भी लिखा था जिसका छह भाषाओं में अनुवाद हुआ था। हिन्दू धर्म को पुनः जीवन्त करने के लिए वे पूरी तरह प्रतिबद्ध थीं। प्राचीन ग्रीस और वर्तमान भारत की तुलना करते हुए उन्होंने यह सम्भावना भी जताई थी कि अनपेक्षित दबावों के कारण हिन्दू भारत "कहीं मृत सभ्यता" बनकर न रह जाए। इसके लिए उनके सामाजिक और राष्ट्रीय स्तर पर अनेक सुझाव थे, जिनमें हिन्दुत्व के पुनर्जागरण एवं पुनर्स्थापन केन्द्र बिन्दु थे।

द्वितीय विश्वयुद्ध के दौरान वे सुभाषचन्द्र बोस की प्रशंसक थीं पर उनका एक बंगाली ब्राह्मण असित कृष्ण मुखर्जी जो 'द न्यू मर्करी' का सम्पादन करते थे, उनसे मिलना एक महत्त्वपूर्ण घटना थी क्योंकि दोनों के विचार समान थे। दोनों ही आर्य–नवोन्मेल के कट्टर समर्थक थे और उन्होंने सन् 1940 में विवाह किया। क्योंकि भारत ब्रिटेन की जर्मनी के विरुट्र लड़ाई का हिमायती था, सुभाष बोस की तरह जर्मनी के प्रशंसक इस दंपति को सरकार सन्देह से देखती थी और कांग्रेसियों ने भी उन्हें अलग–थलग कर दिया। दोनों अपना अधिकांश समय वैदिक परम्पराओं पर विचार–विमर्श करने या हिटलर की आत्मकथा 'माइन काम्फ़' पढ़ने में बिताते थे। सन् 1945 में सावित्री देवी ने अपना ग्रंथ 'द लाइटनिंग एण्ड द सन' प्रकाशित कर हलचल मचा दी थी। उनका इतिहास का दृष्टिकोण एक चक्र जैसा था तो घूमता हुआ पूर्णता के बिन्दु तक पहुंचता है फिर शनैः–शनैः अवनति की ओर जाता है और फिर पूर्णता के लिए यही चक्र फिर प्रारम्भ होता है। सावित्री देवी के अनुसार विष्णु पुराण की इसी समय चक्र की अवधारणा से उन्हें प्रेरणा मिली थी जिसमें कलियुग को सामाजिक व नैतिक पतन के कालखण्ड से जोड़ा गया था।

विश्वयुद्ध के पश्चात भी इंग्लैण्ड और अमेरिका में सावित्री देवी के अनेक समर्थक थे। 60 के दशक के मध्य तक उनकी अनेक पुस्तकें बार–बार नियमित रूप से प्रकाशित होती रहीं। उनकी आर्य श्रेष्ठता की अवधारणा में सेमेटिक धर्मों के विरोध,

शेष पृष्ठ 11 पर ☞

पत्र/कविता

परिवारों के आर्य बनने से ही आर्य समाज की उन्नति होगी।

आजकल अधिकांश आर्य सदस्यों के परिवार अर्थात् पत्नी, पुत्र तथा पुत्रियां आर्य समाज के साप्ताहिक सत्संगों तथा अन्य उत्सवों में नहीं आते–जाते। वास्तव में हमने महर्षि दयानन्द के कहने के अनुकूल आचरण नहीं किया। उन्होंने 31 दिसम्बर 1880 को आर्य समाज पुलवान के मंत्री मास्टर दयाराम वर्मा को एक पत्र में यह लिखा था कि जनगणना में धर्म के खाने में वैदिक धर्म और जाति के खाने में आर्य लिखाया जाए और पंजाब में सब आर्य समाजों को यह बता दिया जाए परन्तु अधिकांश आर्य समाजियों ने इस ओर ध्यान नहीं दिया और अब तक धर्म के खाने में हिन्दू ही लिखते जा रहे हैं। आर्य समाज को शिरोमणि सार्वदेशिक सभा को वैदिक धर्म स्थापना घोषित करनी चाहिए।

आर्य प्रतिनिधि सभाओं ने भी इस ओर ध्यान नहीं दिया जबकि इस बारे में तो खूब प्रचार होना चाहिए था। यह ठीक है कि हम हिन्दुओं से अलग नहीं हैं, इसलिए कोष्ठक में वैदिक धर्म के साथ हिन्दू भी लिख–लिखा सकते हैं। यह प्रचार सार्वदेशिक सभा तथा प्रादेशिक प्रतिनिधि सभाओं द्वारा होना चाहिए कि सभी आर्य सदस्य सरकारी तथा अन्य सभी कर्मों में धर्म के खाने में वैदिक धर्म लिखाएं।

महर्षि दयानन्द ने संस्कार विधि के गृहस्थाश्रम संस्कार में यह लिखा है कि अपने घरों में प्रातः व सायं संध्या तथा हवन किया करें, जिसकी संक्षिप्त विधि है।

सभी आर्य जन अपनी सन्तानों के विवाह गुण–कर्मानुसार जन्म जाति का विचार किए बिना आर्य विचारधारा के लोगों के साथ किया करें। तभी हमारे परिवार आर्य बन सकते हैं।

अपने पुत्रों की आयु 18 वर्ष से ऊपर होने पर, आर्य समाज के सदस्य बनाएं तथा सब की पत्नियां आर्य स्त्री समाज की सदस्य बनें तथा उनके सत्संग में जाया करें।

मेरा विश्वास है कि उपरोक्त बातों के अनुकूल आचरण करने से हमारे परिवार आर्य समाजों में आने लगेंगे और वैदिक ध र्म अस्तित्व में आ जाएगा। कवि की यह चार पंक्तियां सब को याद रखनी चाहिएं। महर्षि दयानन्द ने कहा था कि मैंने कोई समाज कोई नया पथ नहीं बनाया वैदिक धर्म के प्रचार के लिए इसे बनाया है। यह एक संस्था अथवा आन्दोलन है।

आर्य हमारा नाम है, वैदिक हमारा धर्म।

ओम् हमारा ईश है, यज्ञ योग हमारा कर्म।।

सत्य हमारा लक्ष्य है, गायत्री महामंत्र।

भारत हमारा देश है सदा रहे स्वतंत्र।।

अश्वनी कुमार पाठक, बी–4/256 सी केश्वपुरम, दिल्ली–110 035,

आवाज बनना है तुम्हें

उठो जागो बेटियो
आवाज़ बनना है तुम्हें
एक नई क्रांति का–
आगाज़ बनना है तुम्हें।

पुरुष प्रधान समाज ने
बहुत कर लिया और कह लिया,
बेटी, बहू, पत्नी बन हमने
बहुत कुछ है सह लिया
अब न सहेगी, न थमेगी जो
वो परवाज बनना है तुम्हें
एक नई क्रांति का –
आगाज़ बनना है तुम्हें।

'लौ' लगी है आज जो
उस आग को तुम आब दो,
सड़े गले समाज के–
अंधे कानून को जवाब दो
न्याय मिले हर नारी को
शंखनाद बनना है तुम्हें
एक नई क्रांति का
आगाज बनना है तुम्हें।

बेटे मेरे जो क्रान्तिपथ पर
आज तुम्हारे साथ हैं,
उम्मीद है बदलेगा समाज
हाथ में जो हाथ है,
साज़ बनना है तुम्हें
एक नई क्रान्ति का–
आगाज़ बनना है तुम्हें।

डॉ. नीलम अरूण मित्तु (प्राचार्या)
गोपीचन्द आर्य महिला कॉलेज
अबोहर (पंजाब) 152116

क्या चाणक्य का अवतार संभव है?

विश्व मे आज भी चाणक्य नीतियों को सबसे प्रमुख आधार माना जाता है। लोकतंत्र में, चन्द्रगुप्त तो हज़ारों पैदा हो सकते हैं परन्तु चाणक्य पैदा होना असंभव है। जिस प्रकार "कोहिनूर हीरा" अभी तक सर्वोच्च प्राथमिकता है ठीक उसी प्रकार राजनीति में चाणक्य नीतियाँ सर्वोच्च प्रासंगिकता बनाये हुए हैं।

यह खेद है कि हमारे देश के विभिन्न राजनैतिक दल सत्ता की होड़ में चाणक्य नीतियों को दरकिनार कर दिये। यह उल्लेखनीय है कि सम्राट चन्द्रगुप्त के विश्व विजयी बनने में चाणक्य का प्रमुख योगदान था। केवल इतना ही नहीं विश्व विजेता "सिकन्दर" को यदि "अरस्तू" जैसे महान् दार्शनिक का आशीर्वाद न मिलता तो विश्वविजेता नहीं बन सकता था।

काश हमारे देश के "चाणक्य" पुनः आ जायें और वास्तविक लोकतन्त्र की स्थापना सम्भव हो और हम विश्व विजेता का परचम लहरा सकें।

कृष्णामोहन गोयल
अमरोहा 244221

****

जो संयम से रहता है वही सुखी रहता है।

सन्ध्या हवन के बाद आनन्द स्वामी जी ने अपने प्रवचन में चार 'स' अपनाने का उपदेश दिया। पहले 'स' से सन्ध्या करना, दूसरे 'स' स्वाध्याय करना, तीसरे 'स' से सत्संग में जाना, चौथे 'स' से सेवा करने की प्रेरणा दी। मै इसमें पाँचवा 'स' और जोड़ना चहाता हूँ जिससे संयम बनता है। जो संयम से रहता है वह सुखी रहता है। जो मात्र इन्द्रियों का दास बनकर रहता है वह दुखी रहता है। बिना संयम के जीवन ऐसा है जैसे बिना ब्रेक की गाडी। जिस गाड़ी में ब्रेक नही है वह कहीं भी दुर्घटना ग्रस्त हो सकती है। अतः जीवन में संयम का होना भी बहुत आवश्यक है।

देवराज आर्य मित्र
हरी नगर, नई दिल्ली–64

****

पाश दुखःदाई होते है और व्रत के नियम आत्मोत्थान मे साहायक

● राज कुकरेजा

उ दुत्तमं वरुणपाशमस्मदवाधं वि मध्यमं श्रथायअथा वयमादित्य व्रते तवानागसो अदितये स्याम इस मन्त्र में तीन पाशों का वर्णन है और इन तीनों से साधक मुक्त होने की ईश्वर से प्रार्थना करता है, तीनों पाशों की व्याख्या विद्वानों ने अपने स्तर से अलग–अलग की है, ये पाश उत्तम, अधम और मध्यम है, ऋषि दयानन्द सरस्वतीजी ने अधमं को निकृष्ट, मध्यम को निकृष्ट से कुछ विशेष और उत्तम को अति दृढ़, अत्यंत दुःख देने वाले किया है, पं युधिष्ठर मीमांशकजी ने इन पाशों को क्लेश (अविद्या) का भावार्थ किया है, मनुष्य की ऐषणाओं को पाश, कई विद्वानों ने पायों के भाव में भी लिया है, कहने व लिखने की शैली विद्वानों की भिन्न–भिन्न हो सकती है, परन्तु भाव सबका एक ही है। श्रोता अथवा पाठक इन भावार्थों को अपनी बुद्धि के स्तर से ग्रहण करता है। जो भाव समझने में सरल और सुगम हो उसे ग्रहण कर हृदयंगम कर लेता है।

वेदवाणी पत्रिका में एक विद्वान ने इस मन्त्र का भावार्थ करते हुए समझाया कि ऐषणा ही पाश है, बुद्धि स्तर पर इस बात को बैठाना थोड़ा कठिन लगा कि इन पाशों का वर्गीकरण उत्तम, अधम और मध्यम क्यों किया गया है, पाश अर्थात् बंधन तो सदैव दुखदायी होता है, बंधा हुआ चाहे सोने की जंजीर से है या लोहे की जंजीर से, बंधन तो बंधन ही होता है, मन्त्र में उत्तम, अधमं और मध्यम कहा गया है तो रहस्य तो छिपा हुआ है, यदि हम तीन पाशों को व तीन ऐषणाओं को एक साथ जोड़ने और समझने का प्रयास करें तो रहस्य की ग्रन्थि खुलने लगती है, आज हम स्वयं पर, समाज पर, राष्ट्र पर दृष्टिपात करें तो हम सभी इन पाशों में जकड़े हुए हैं और ये पाश उत्तम, अधम और मध्यम के वर्गों में स्थापित होते हैं।

उत्तम पाश क्या है? इसको हम इस प्रकार समझते हैं कि व्यक्ति उत्तम कर्म करते हुए लोकैषणा से जब ग्रस्त होता है तो यह उत्तम पाश है, ज्ञान का क्षेत्र सबसे उत्तम माना गया है, शरीर में ज्ञान का स्थान मस्तिष्क है और शरीर का यह भाग उत्तम माना गया है, व्यक्ति थोड़ा ज्ञान प्राप्त करता है तो उसके साथ अहम् भाव को जोड़ लेता है, मन में टीस सी होती रहती है कि उसे ज्ञानी समझा जाए, इस प्रकार अन्य जन भी जिस–जिस कार्य क्षेत्र में उत्तम करने की भावना से उतरते हैं, स्वयं को लोकैष्णा के बंधन में बाँधने लग जाते हैं, परोपकार का कार्य करने वाला परोपकारी, धर्म का कार्य करने वाला धार्मिक, दान देने वाला दानी, समाज सेवा करने वाला समाज सेवक इत्यादि उपाधियों से स्वयं को विभूषित करना चाहते हैं, सदैव प्रयत्नशील रहते हैं कि समाज में उन्हें प्रतिष्ठा मिले और समाज में सम्मानित किये जाएँ, कार्य तो उत्तम कर रहे हैं परन्तु भावना लोकैष्णा के कारण बधन में बंध जाते हैं, यह उत्तम पाश है।

अधम पाश अर्थात निकृष्ट पाश को शरीर के निम्न भाग से लिया गया है, शरीर के प्रति आसक्ति, संसार के प्रति आसक्ति अधम पाश है, यह वितैष्णा की इच्छा को बढ़ाते हैं। अधः पतन अर्थात् नीचे की ओर ले जाने वाले क्रम करने को व्यक्ति उद्यत हो जाता है, शरीर के प्रति आसक्ति को समझने का प्रयास करें। शरीर जड़ है और आत्मा चेतन है, व्यक्ति चेतन को भूलकर शरीर की सुन्दरता की ओर आकर्षित रहता है, सारा समय इस की सुन्दरता व इस सुन्दरता के बढ़ाने के साधनों में समय और धन अपव्यय करता है, प्रत्येक व्यक्ति अपनी शारीरिक सुन्दरता की लालसा से पीड़ित केवल इन तीन बिन्दुओं पर अपना ध्यान केन्द्रित करता है, मैं कैसे दिखता हूँ इस रूप प्रदर्शन में सौन्दर्य प्रसाधनों व आधुनिक दिखने वाली वेशभूषा पर समय और धन चाहिए, प्रत्यक्ष प्रमाण हमारे सामने आज के बाज़ार हैं जो इन्हीं उत्पादनों से भरे पड़े हैं, लगता है कि देश की अर्थव्यवस्था इन्हीं पर निर्भर हो रही है, दूसरा बिन्दु है– प्रतिष्ठा, समाज में मेरी प्रतिष्ठा, मेरी बड़ी कार, बड़ा आलिशान मकान और मेरे बच्चे, प्रतिष्ठित, खर्चीले स्कूलों में पढ़ने वाले हों, इस प्रतिष्ठा व पहचान बनाने के लिए आय का स्रोत अच्छा होना चाहिए, सीमित साधनों से तो इस प्रकार की प्रतिष्ठा बनानी कठिन हो जाती है तो अन्य असामाजिक तरीकों को अपनाने में संकोच नहीं करता, कर–चोरी, मिलावट, नकली सामान, रिश्वतखोरी, भ्रष्टाचार इत्यादि तो आज सामान्य से दिखने वाले अपराधों को नि–संकोच करने लग जाता है, अर्थ की शुचिता का कोई महत्त्व ही नहीं रह जाता है, तीसरा बिन्दु है मैं स्वयं में कैसा हूँ इसकी चिंता नहीं परन्तु मुझे लोग कैसा समझे, यह विचार सदा सताता रहता है, इसलिए सारे क्रिया–कलाप अन्यों को प्रभावित करने हेतु होते हैं, सच ही तो कहा है कि लोग अपने अभाव से इतने दुखी नहीं है जितने दूसरों के प्रभाव से दुखी हैं, भोगवादी मानसिकतावाले सदा अतृप्त रहते हैं यह वितेष्णा का पाश निम्नकोटि का है, इससे मैं नित्य आत्मा हूँ, इसको पूर्णतः भुलाकर केवल नश्वर अनित्य शरीर की कभी न पूर्ण होने वाली तृष्णाओं में बंधा रहता है।

मध्यम पाश को मध्यम स्थान मन को देते हैं, मोह मन से ही सम्बन्धित होता है, मन से ही मोह उत्पन्न करते हैं, सन्तान का मोह सब मोहों से प्रबल होता है, यह पुत्रैष्णा का पाश है, गर्भ से बाहर आते ही बालक का माता से जो सम्बन्ध था, उसे नाड़ी छेदन से अलग कर दिया जाता है, शारीरिक रूप से सन्तान अलग हो गई परन्तु मोह रूपी डोरी से जीवन पर्यन्त माता–पिता सन्तान से बंधे रहते हैं, सन्तान को ही अपनी आत्मा मानने लगते हैं, मोह का बंधन व्यक्ति को अँधा बना देता है, पुत्रेष्णा के कारण अविवेकी होकर उचित–अनुचित का निर्णय नहीं कर पाता, रामायण और महाभारत इसके साक्षी हैं। कैकेयी और धृतराष्ट्र के चरित्र हमारे सामने ज्वलंत प्रमाण हैं कि पुत्रैष्णा से पीड़ित कर्तव्य–अकर्तव्य, न्याय–अन्याय के विवेक को खो देते हैं, मन के द्वारा ही काम, क्रोध, मोह, लोभ इत्यादि आसुरी वृत्तियों को उत्पन्न करते हैं और मानसिक रोगी बन जाते हैं, पुत्रैष्णा के पाश में बंधा व्यक्ति दुखी व पीड़ित रहता है।

लोकैष्णा, वित्तैष्णा और पुत्रेष्णा कार्य भेद के कारण तीन पाशों को उत्तम, अधम और मध्यम संज्ञा दी गई है, इन तीनों पाशों में से हरेक पाश बंधन में बाँधने में सक्षम है, जो तीनों से जकड़ा हुआ है, उसकी शोचनीय अवस्था का क्या कहना, बंधा हुआ व्यक्ति तो कई बार पाशों के बंधन को अपनी अविद्या के कारण अपने जीवन का अंग मानकर जीवन जीने लगता है, जब कभी ईश कृपा से अविद्या का आवरण विद्वानों के सत्संग से छटने लगता है तो इन पाशों को दुखदायी व मृगतृष्णा के समान समझने लगता है तो इन तीनों पाशों से छुटकारा पाना जीवन का ध्येय समझकर सर्वश्रेष्ठ, उपासनीय वरुण परमेश्वर से प्रार्थना करने लगता है कि हे– ईश्वर! आप शुभ, श्रेष्ठ, उत्तम कर्मों को करने की प्रेरणा देते रहिए और आपकी ही कृपा से ज्ञान के उच्च स्तर पर पहुँच सकें परन्तु अहम भाव न आने पाए अर्थात ऐषणाओं की लालसा पीड़ित न करे, इन तीनों पाशों को आप शिथिल कर दें।

इन सबके अनन्तर भक्त यह भी प्रार्थना करता है कि इन बन्धनों (पाशों) से मुक्त होने के जो साधन हैं, उन्हें जीवन में धारण करनेवाले तथा परिणाम में सुख–शान्ति देने वाले हैं, उनका अनुसरण करने वाला बनें, इसी से पापरहित अर्थात् शुद्ध पवित्र होकर दुःखों व बन्धनों से मुक्त होकर सुखों को निरंतर प्राप्त करते हुए मोक्ष के अधिकारी बनें।

सदा स्मरण रखें कि पाश दुखदायी होते हैं और व्रत के नियम आत्मोत्थान में सहायक होते हैं, अतः हम ईश्वर की कृपा के पात्र बनें और जीवन में व्रतों को धारण करें।

786/8 अर्बन एस्टेट
करनाल–132001 हरियाणा

☞ पृष्ठ 9 का शेष

आर्य – हिन्दू धर्म की ..

डारविनवाद, पशुओं के अधिकार एवं हिन्दू धर्म व दर्शन का जो मिला–जुला रूप था वह अनेक लोगों को चुम्बक की तरह सम्मोहित करता था।

उनके पति असित कृष्ण मुखर्जी की 1977 में मृत्यु हो गई थी और आर्य–हिन्दू प्रतिभा की यह पुजारिन 22 अक्तूबर 1982 में इंगलैण्ड के एसेक्स नामक स्थान पर दिवंगत हो गईं। यद्यपि विदेशों में उनके सैकड़ों प्रशंसक थे पर उन्हें विवादित करने वाले साम्यवादी और अनेक विद्वेषी लेखक यही रट लगाते रहे कि वे नाजी और हिन्दुत्व के विचारों को प्राचीन आर्य बुद्धि व ज्ञान का संयुक्त उत्तराधिकारी मानती थीं। इन्हीं लोगों ने पवित्र हिन्दू प्रतीक स्वास्तिक को भी हिटलर द्वारा स्वीकृत किए जाने पर अनर्गल प्रचार का माध्यम बनाया था। असित कृष्ण मुखर्जी ग्रीक, मिश्री और वैदिक संस्कृति के गंभीर अध्येता थे। इतना ही नहीं उनके एक भारतीय साम्यवादी आलोचक सुमन्त बनर्जी थे, जिनका नाम असित मुखर्जी थे, जिन्हें उन्होंने किसी बोल्शेविक विरोधी षड्यंत्र के अन्तर्राष्ट्रीय मोहरे के रूप में भी चित्रित किया था (कुछ भी हो उनका जीवन विवादों ने एक अनबूझ पहेली बना दिया था।

यह विस्मयजनक है कि सन् 1939 में सावित्री देवी ने अपने ग्रंथ 'ए वारनिंग टु द हिन्दुज' जो लिखा था वह आज भी प्रासंगिक व साभिप्राय है – "सारे भारत के लिए वह संस्कृति अपेक्षित है जिसका आधार हिन्दू हो। हिन्दू जाति का सैन्यकरण जिसमें सारी नागरिक जनसंख्या को एक स्थयी हिन्दू मिलेशिया का रूप दिया जा सके। वही उसे मुस्लिम अत्याचारों व षड्यंत्रों से भविष्य में बचा सकती है।

जहां तक वृहद् हिन्दू समाज का प्रश्न है, सावित्री देवी, कुछ प्रतीत लगने वाले विरोधाभासों के बावजूद, सदैव एक राष्ट्रवादी के लिए प्रेरणा–स्त्रोत रहेंगी।

ए–1002 पंचशील हाईट्स महावीर नगर,
कान्दिवली (प.), महावीर नगर/मुम्बई
400067 दूरभाष : 28606451

Delhi Postal R. No. D.L. (ND)-11/6066/2012-14
अग्रिम अदायगी के बिना भेजने का लाइसैंस नं. U(C)-103/2012-14
POSTED AT N.D.P.S.O. ON 13-14/03/2013
रजिस्ट्रेशन नं. आर0 एन0 आई0 39/57

महर्षि दयानन्द जन्मोत्सव मनाया गया

आर्य समाज एवं आर्यशिक्षण समिति बूढा द्वारा संचालित आर्य बाल मन्दिर में आयोजित महर्षि दयानन्द जन्मोत्सव में पधारे अध्यक्ष श्री रतनलाल जी आर्य ने बताया की वेदों में जीवन का सार है। वेदो का अनुसरण करके ही जीवन का वास्तविक कल्याण किया जा सकता है। व्यक्ति वेदो को सच्ची शिक्षा से ही संस्कारवान होता है।

कार्यक्रम के मुख्य अतिथि श्री अर्जुनलाल नरेला प्रधान आर्य समाज नीमच, विशेष अतिथि श्री बंशीलाल जी आर्य ,अंतरंग सदस्य, मध्य भारतीय आर्य प्रतिनिधि सभा व श्री सत्येन्द्र जी आर्य संस्कार विशेषज्ञ ने अपने ओजस्वी उद्बोधन मे महर्षि दयानन्द के बताये मार्ग पर चलते हुए वेदो की ओर लोटकर जीवन को संस्कारवान बनाने का संकल्प लेने की शिक्षा दी।

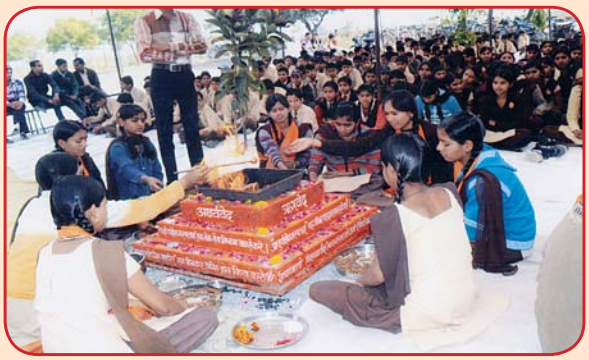

कार्यक्रम का प्रारम्भ ईश्वर स्तुति ब्रह्म यज्ञ एवं देव यज्ञ के साथ किया गया।

अतिथियों का स्वागत पुष्पमालाओ द्वारा किया गया इस अवसर पर श्री मोहन लला जी आर्य द्वारा रचित ईश्वर चालिसा पुस्तक का विमोचन भी अतिथियों द्वारा किया गया।

विभिन्न प्रतियोगिता जैसे, मंत्र पाठ, श्लोक वाचन, स्वस्ति वाचन, वाद विवाद प्रतियोगिता आयोजित की गई। विजेता, उपविजेता को परूस्कार स्वारूप सत्यार्थ प्रकाश एवं ऋग्वेदिभाष्य भूमिका एवं अन्य आर्य भेंट किया गया।

इस अवसर पर 700 छात्र/छात्राएं सम्मीलित हुए। कार्यक्रम का समापन शांतिपाठ के साथ विधिवत् सम्पन्न हुआ।

डीएवी व आर्य समाज का केन्द्रीय कारागृह कोटा में हुआ कार्यक्रम

मन में उठने वाली काम, क्रोध, लोभ, अज्ञान, मोह अहंकार की दुर्वतियाँ की त्याग हमें मानव जीवन श्रेष्ठ बनाया जा सकता है। केन्द्रीय कारागार कोटा में आयोजित एक कार्यक्रम में कैदियों को संबोधित करते हुए आर्य प्रतिनिधि सभा नई दिल्ली के महामंत्री एस.के शर्मा ने कही। इस अवसर पर कैदियों को तिल से बनी मिठाई वितरित की गई।

कार्यक्रम को संबाधित करते हुए शर्मा ने कहा कि हमें मानव शरीर मिला है। यह मानव शरीर 84 लाख योनियों में भ्रमण करने के बाद प्राप्त होता है। कई जीवों को कीडे मकौडे बनकर जीवन यापन करना पड़ता है। ऐसे में एक बार मानव जीवन निकल गया तो फिर 84 लाख योनियों में भटकना होगा। इसलिए मानव शरीर के इस चोले के महत्व को समझना चाहिए।

जिला आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान अर्जुन देव चढ्डा ने आर्य समाज के डठे नियम का अणुसरण करने और नशामुक्त समाज के निर्माण पर जोर दिया।

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा के सहूमंत्री सत्यपाल आर्य ने कहा कि हम जेल में हैं, इस बात को हमें स्वीकार करना चाहिए। उन्होंने कहा कि गायत्री मंत्र का पाठ करके जेल को भी मंदिर बनाया जा सकता है।

आचार्य डॉ. प्रमोद योगार्थी ने कहा कि हम अपने विचारों को उंचा उठाएं।

आचार्य अग्निमित्र शास्त्री ने जो सांसारिक मोह माया के बंधनों के बाद भी ईश्वर से जुड़ा रहता है। वह इस संसार सागर को पार कर जाता है।

जेल अधीक्षक शंकर सिंह को आर्य समाज की ओर से स्मृति चिन्ह देकर सम्मानित किया गया।

डी.ए.वी. इंटरनैशनल, अमृतसर में हुई राष्ट्र-स्तरीय स्केटिंग प्रतियोगिता

सी.बी.एस.ई की राष्ट्र–स्तरीय स्केटिंग प्रतियोगिता का आयोजन डी.ए.वी इंटरनैशनल, अमृतसर में बहुत ही सफलता पूर्वक किया गया। इस प्रतियोगिता में देश भर के पाँच जोनों के 453 स्केटिंग खिलाड़ियों ने भाग लिया। प्रतियोगिता के उद्घाटन पर श्री पुष्कर वोहरा, उपनिदेशक, सी.बी. एस. ई. खेल विभाग, मुख्य अतिथि थे। श्री जी.डी. शर्मा दूरदर्शन जालंधर विशेष माननीय अतिथि थे। विद्यालय के चेयरमैन डा. वी.पी. लखनपाल, श्रीमती नीलम कामरा, डा. के एन. कौल भी इस समारोह में विशेष रूप से उपस्थित थे।

मुख्य अतिथि, श्री पुष्कर वोहरा, ने विद्यार्थी जीवन में शिक्षा के साथ–साथ खेलों की महत्ता बताई और खेलों को विद्यार्थी के सर्वांगीण विकास के लिए अनिवार्य बताया।

समापन समारोह के अवसर पर

भव्य रंगारंग कार्यक्रम आयोजित किया गया। इस अवसर पर सी.बी.एस. ई. के चेयरमैन श्री विनीत जोशी मुख्य अतिथि थे। श्री जे.पी. शूर जी निदेशक पब्लिक स्कूलज् डी.ए.वी. प्रबन्धकर्तृ समिति, नई दिल्ली विशेष माननीय अतिथि थे।

श्री विनीत जोशी जी और जे.पी. शूर जी ने विद्यालय में नव निर्मित भवन स्टूडियो जोन का उद्घाटन किया। श्री विनीत जोशी ने बच्चों की प्रस्तुति की प्रशंसा की। और देश भर से आए स्केटिंग खिलाड़ियों को बधाई दी। उन्होंने डी.ए.वी. प्रबन्धरकर्तृ समिति, नई दिल्ली की सराहना की जिसके अन्तर्गत कार्यरत सभी डी.ए.वी. स्कूल सी. बी. एस. ई. की शिक्षा नीतियों का पालन सफलता पूर्वक कर रहे हैं।,

डी.ए.वी. इंटरनैशनल स्कूल ने 47 अंकों के साथ प्रथम स्थान प्राप्त किया और ओवर ऑल विजेता की ट्राफी प्राप्त की।

मुद्रक व प्रकाशक – **श्री प्रबोध महाजन,** सभा मंत्री द्वारा **मदन गोयल** के प्रबंध में **अरावली प्रिंटर्स एण्ड पब्लिशर्स (प्रा.) लि.,** डब्ल्यू–30, ओखला, फेस–II, नई दिल्ली–110020 (दूरभाष : 26388830–32) से मुद्रित कार्यालय **'आर्य जगत्'** आर्यसमाज भवन, मन्दिर मार्ग, नई दिल्ली–110001 से प्रकाशित। स्वामित्व – आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा, मन्दिर मार्ग, नई दिल्ली–110001 (दूरभाष : 23362110, 23360059) सम्पादक – **श्री पूनम सूरी**